SAPTHAGIRI (HINDI)
SPIRITUAL ILLUSTRATED MONTHLY
Volume:55, Issue: 07,
December-2024, Price Rs.20/-,
No. of pages-56.

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

सप्तगिरि

आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका

दिसंबर-2024
रु.20/-

गीताजयंती
दि. 11-12-2024

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

श्री वेंकटेश्वर अन्नप्रसाद ट्रस्ट

तिरुमल, तिरुचानूर में हजारों की संख्या में भक्तों को प्रतिदिन अन्नप्रसाद वितरण की बात भक्तों को विदित ही है। अब ति.ति.दे. अन्नप्रसाद ट्रस्ट भक्तों, दाताओं को दान देने का अवसर देना चाहता है। इसलिए एक दिन दान की योजना प्रवेश कर रहा है।

एक रोजाना खर्च -

1. एक दिन - 44 लाख
2. अल्पाहार - 10 लाख
3. मध्याह्न भोजन - 17 लाख
4. रात्रि भोजन - 17 लाख

तिरुमल तिरुपति देवस्थानों का अन्नदान ट्रस्ट इस नकद को दाताओं से स्वीकार करने के लिए सिद्ध हो रहा है। दाताओं - व्यक्तियों/कंपनियों/संस्थाओं/ट्रस्टों/संयुक्त ढंग से भी इस ट्रस्ट को दान दे सकते है। 44 लाख दान देने वाले दाताओं को 25 लाख दान देने वाले दाताओं की सुविधाएँ प्रदान की जाएगी। अल्पाहार, मध्याह्न भोजन, रात्रि भोजन का दान देने वाली दाताओं को, 10 लाख दान देने वाले दाताओं की सुविधाएँ प्रदान की जाएगी।

अपनी मर्जी के अनुसार सूचित एक दिन पर अन्नदान कर सकती है।
और दाता का नाम भी अन्नदान केंद्र में डिसूप्ले होता है।

अन्य विवरण के लिए संपर्क करें -

उप कार्यकारी अधिकारी (डोनार सेल), आदिशेषु विश्रांति भवन, ति.ति.दे., तिरुमल।

वेबसाइट - cdmc.ttd@tirumala.org / dyeodonorcell.ttd@tirumala.org

दूरभाषा - 0877-2263001 (24X7), 0877-2263472 (कार्यालय समय में)

(सूचना - उपर्युक्त विषयों पर परिवर्तन होने की संभावना है।)

वेदाविनाशिनं नित्यं य एनमजमव्ययम्।
कथं स पुरुषः पार्थ कं घातयति हन्ति कम्॥

(- श्रीमद्भगवद्गीता - सांख्ययोग २-२१)

हे पार्थ! वह जो यह जानता है कि आत्मा अविनाशी, शाश्वत, अजन्मा और अपरिवर्तनीय है, वह किसी को कैसे मार सकता है या किसी की मृत्यु का कारण हो सकता है?

चेकोंटि निहमे चेरिन परमनि
गैकोनि नीविंदु कलवे कान ॥चेकोंटि॥

जगमुन कलिगिन सकल भोगमुलु
तगिन नी प्रसादमुले इवि
अडपडु नेबदि अक्षरपंक्तुलु
निगम गोचरपु नीमंत्रमुले ॥चेकोंटि॥

पोदिगिन संसार पुत्र दारलिल
वदलिन नी दास वर्गमुले
चेदरक ये पोद्दु जेयु ना पनुलु
कदिसिन नी याज्ञकैंकर्यमुले ॥चेकोंटि॥

नलुगड मिंचिन ना जन्मादुलु
पलुमरु लिटुनी पंपुलिवि
येलमिनि श्रीवेंकटेश्वर नीविक
वलसिनप्पुडी वरमुलु नाकु ॥चेकोंटि॥

इहलोक (संसार) में भी परमात्मा के तत्त्व को पहचानने की वांछा होनी चाहिए।

इस संसार के सभी सुख भगवान की ही देन हैं। समस्त अक्षर-राशि, वेदों में गोचर होनेवाले मंत्र हैं। पत्नी-संतान सब भगवान के दास-कूट के ही हैं तथा जीव के सभी कर्म भगवान के आज्ञानुसार किये जानेवाले उपचार हैं। जीवों के सभी जन्म, भगवान के संकल्प ही हैं। श्री वेंकटेश अपनी इच्छा के अनुसार भक्तों की इच्छाओं की पूर्ति करते हैं। इसी कारण कर्मों की फल-प्राप्ति के बारे में चिंता करना अनावश्यक है।

संकीर्तना सौजन्य - ति.ति.दे. प्रकाशक, अन्नमाचार्य गीत-माधुरी, डॉ.पी.नागपद्मिनी

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

ओंटिमिट्टा, श्री कोदंडरामस्वामी मंदिर

आंध्रप्रदेश, कडपा जिला, ओंटिमिट्टा प्रांत में विराजित श्री कोदंडरामस्वामी मंदिर बहुत प्राचीन श्रीराम मंदिर है। इस प्रांत को 'एकशिलानगर' भी कहते हैं। इस मंदिर का निर्माण जांबवंत ने किया। इस आलय से संबंधित दर्शन एवं सेवा का विवरण निम्नांकित हैं।

मंदिर का दर्शन समय

प्रातः 5.00 बजे से रात 9.00 बजे तक भगवान जी को दर्शन कर सकते है।

प्रातः 5.00 बजे से सुबह 7.30 बजे तक दर्शन

सुबह 7.30 बजे से सुबह 8.15 बजे तक प्रथम घण्टानाद

सुबह 8.15 बजे से सुबह 10.30 बजे तक दर्शन

सुबह 10.30 बजे से सुबह 11.15 बजे तक द्वितीय घण्टानाद

सुबह 11.15 बजे से सायं 5.30 बजे तक दर्शन

सायं 5.30 बजे से सायं 6.15 बजे तक तृतीय घण्टानाद

सायं 6.15 बजे से रात 8.45 बजे तक दर्शन

रात 8.45 बजे से रात 9.00 बजे तक एकांतसेवा

भगवान जी का सेवा टिकट विवरण

1) कल्याणोत्सव - रु.1,000/- दो व्यक्ति के लिए, समय सुबह-9.00 बजे को

2) अभिषेक - रु.150/- दो व्यक्ति के लिए, हर शनिवार, समय सुबह-6.00 बजे को

3) स्वर्ण पुष्पार्चन - रु.250/- एक व्यक्ति के लिए, हर रविवार, समय सुबह-8.30 बजे को

सूचना

मंदिर के प्रांगण में स्थित काउण्टरों में (या) ऑनलाइन के माध्यम से भी टिकट प्राप्त कर सकते है। कृपया भेंट हुण्डी में ही डालें।

सप्तगिरि

तिरुमल तिरुपति देवस्थान की
आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका

वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन।
वेंङ्कटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति॥

वर्ष-55 दिसंबर-2024 अंक-07

विषयसूची

श्री वेंकटेश्वर के तपस्या का फल श्री अलमेलुमंगा	डॉ.के.सुधाकरराव	07
इतिहास - गीता साहित्य	श्री वेमुनूरि राजमौलि	11
श्री वेंकटाचल की महिमा	आचार्य आई.एन.चंद्रशेखर रेड्डी	15
तिरुप्पावै - गोदादेवी द्वारा ईश्वर प्राप्ति मार्ग	श्री देवपूजला राजकुमार	18
तिरुपति श्रीवेङ्कटेश्वर (तिरुपति बालाजी)	प्रो.यद्दनपूडि वेङ्कटरमण राव प्रो.गोपाल शर्मा	23
स्कन्द षष्ठी का महत्व	श्रीमती टी.लता मंगेश	31
दाक्षायणी	डॉ.के.एम.भवानी	35
रामभक्त हनुमान	डॉ.जी.मोहन नायुडु	37
श्री प्रपन्नामृतम्	श्री रघुनाथदास रान्दड	39
सदाचार	डॉ.रमेश कृष्णा	41
मूली की उपचार शक्ति	डॉ.सुमा जोषि	44
आइये, संस्कृत सीखेंगे..!!!	श्री अवधेष कुमार शर्मा	46
दिसंबर महीने का राशिफल	डॉ.केशव मिश्र	47
नीतिकथा - देवी के दर्शन	श्री के.रामनाथन	48
चित्रकथा - महान दाता कर्ण	कुमारी के.वैष्णवी	50
क्विज - 29		52

website: www.tirumala.org वेबसैट के द्वारा सप्तगिरि पढ़ने की सुविधा पाठकों को दी जाती है।
सूचना, सुझाव, शिकायतों के लिए - sapthagiri.helpdesk@tirumala.org

मुखचित्र - श्री वेंकटाद्री गोविंदा।
चौथा कवर पृष्ठ - श्री गोदादेवी (श्री गोविंदराजस्वामी मंदिर)।

गौरव संपादक
श्री जे.श्यामला राव, आई.ए.एस.,
कार्यनिर्वहणाधिकारी, ति.ति.दे.

प्रधान संपादक
डॉ.के.राधारमण

संपादक
डॉ.वी.जी.चोक्कलिंगम

उपसंपादक
श्रीमती एन.मनोरमा

मुद्रक
श्री पी.रामराजु
विशेष अधिकारी,
पुस्तक बिक्री केंद्र & मुद्रणालय,
ति.ति.दे., तिरुपति।

स्थिरचित्र
श्री पी.एन.शेखर, मुख्य-फोटोग्राफर, ति.ति.दे., तिरुपति।
श्री बी.वेंकटरमण, सहायक छायाचित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

एक प्रति .. रु.20-00
वार्षिक चंदा .. रु.240-00
जीवन चंदा (12 वर्ष ही मात्र) .. रु.2,400-00
विदेशियों के लिए वार्षिक चंदा .. रु.1,030-00

अन्य विवरण के लिए
CHIEF EDITOR, SAPTHAGIRI, TIRUPATI - 517 507.
Ph.0877-2264543, 2264359, Editor - 2264360.

सूचना
मुद्रित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखक के हैं। उनके लिए हम जिम्मेदार नहीं हैं।
- प्रधान संपादक

संपादकीय

तिरुमल में तिरुप्पावै

दयामय करुणा सागर भक्तवत्सल भगवान तिरुमल श्री वेंकटेश्वरस्वामी को प्रतिदिन सुप्रभात सेवा से लेकर एकांत सेवा तक कई पूजा-कैंकर्य संपन्न किया जाता है। इसके साथ-साथ तिरुमल भगवानजी को प्रति नित्य नित्योत्सव, वारोत्सव (साप्ताहिक उत्सव), पक्षोत्सव, मासोत्सव, वार्षिकोत्सव जैसे कई पूजा-कैंकर्य को अत्यंत वैभव से संपन्न किया जाता है। ऐसा कई सेवा होने पर भी हर दिन के लिए ''कौसल्या सुप्रजा राम पूर्वा संध्या प्रवर्तिते'' नामक सुप्रभातस्तवम् से भगवान वेंकटेश्वर का पूजा-कैंकर्य प्रारंभ होती है। यह सुप्रभात गान धनुर्मास के समय को छोड़कर बाकी सभी दिनों में गाना किया जाता है। धनुर्मास के एक महीने के काल पर गोदादेवी (आंडाल) द्वारा लिखित ''तिरुप्पावै'' पाशुरों को भगवान के पास गाना किया जाता है। यह धनुर्मास हर वर्ष साधारणतः मार्गशिर-पुष्य मासों में आते है। माने सौरमान प्रकार दिसंबर महीने के बीच में प्रारंभ होकर जनवरी के कनुमा त्योहार के दिन गोदा कल्याण से समाप्त होती है।

तमिल साहित्य में 4000 पाशुर ''नालायिरदिव्यप्रबंधम'' नाम से प्रसिद्ध हुआ है। यह पाशुरों को वैष्णव भक्ताग्रेसर 12 लोग ''आल्वार'' ने कीर्तन किया हैं। इन्हींको ''दिव्यसूरी'', ''परमयोगी'' नामों से भी जानते हैं। परमयोग यह 12 आल्वार भक्तगण श्री महाविष्णु के बारे में भक्तितत्परता से पाशुरप्रबंध को गान किया है। यह प्रबंध 'वेदों' के समान ख्याति पाई है। इनमें ''तिरुप्पावै'' के लेखिका गोदादेवी ने 30 पाशुरों से गान किया है। गोदादेवी, विष्णुचित्त नामक पेरियाल्वार का लाड-प्यार बच्ची है। श्रीविल्लिपुत्तूर में स्थित वटपत्रसायी श्री महविष्णु को विष्णुचित्त के द्वारा हर दिन फूल मालाओं से कैंकर्य करने के पहले ही, गोदादेवी ने पहले अपने आप को फूल माला धारण कर बाद में भगवानजी को समर्पित करने के कारण से ''आमुक्तमाल्यदा'' और ''चूडिकोडुत्तनाच्चियार'' नाम भी स्थिर हुआ है।

अनेक वैष्णव भक्तग्रेसरों ने भगवानजी का दर्शन करके, कीर्तन की गई वैष्णव प्रधान क्षेत्र ''तिरुमल'' है। पोयगै आल्वार, तिरुमलिशैयाल्वार, नम्माल्वार... ... जैसा आदि आल्वारगण ने श्री वेंकटाचलपति को दर्शन कर, कई प्रकार के गान किया है। 12 आल्वारों में एकैक स्त्री मूर्ति आल्वार 'आंडाल' भी तिरुमल भगवानजी के बारे में कीर्तन किया है।

''वेय्यदोऱ् तलल् मिल् शक्केरक्केय्, वेंगड वर्केन्नैविदिकित्तिये''

गोदादेवी के द्वारा बताई गई यह अंकितभाव से पूजा करने के विधान को दृष्टि में रखकर श्री भगवद्रामानुज जी ने हर धनुर्मास के समयों में तिरुमल, तिरुपति मंदिरों में तिरुप्पावै का गान करने का विधान को प्रारंभित किया है। श्री भगवद्रामानुज जी को गोदादेवी के द्वारा बताई गई यह ''तिरुप्पावै'' पाशुर पर अत्यंत भक्ति-प्रपत्ति है। सर्व वेदों का सार ही तिरुप्पावै है कह कर उनका व्याख्यान और प्रचार भी की गयी व्यक्ति श्री भगवद्रामानुज जी है। इसलिए ''तिरुप्पावै जीयर'' नाम से श्री भगवद्रामानुज जी प्रसिद्ध हुआ है। तिरुमल में इस धनुर्मास के समय में सुप्रभात के स्थान पर आंडाल तिरुप्पावै का पठन जिय्यंगार, एकांगी, वैष्णवाचार एकांत में आयोजित करते है। धनुर्मास के 30 दिन श्री वेंकटेश्वरस्वामी को श्रीकृष्ण के रूप में भावना करके पुजारी पूजा-कैंकर्य संपन्न करते है। इस विशेष उत्सव के संदर्भ में सभी भक्तजन भाग लेकर धन्य बन जाएँ।

ॐ नमो वेंकटेशाय।

श्री वेंकटेश्वर के तपस्या का फल श्री अलमेलुमंगा

तेलुगू मूल - श्री जूलकंटि बालसुब्रह्मण्यम्
हिन्दी अनुवाद - डॉ.के.सुधाकरराव

क्या? साक्षात् भगवान आनन्दनिलय ने ही तपस्या की! सात पर्वतों पर स्वर्णहर्म्य आनंदनिलय में विराजमान प्रभु ने सचमुच तपस्या की। उस देवाधिदेव की तपस्या के फलस्वरूप अलमेलुमंगा का अवतरण हुआ है क्या? अत्यन्त विचित्र है न! विस्मयकारी है न! पता नहीं यह कथा किस जमाने की है? पता नहीं कब घटित हुई है? क्या यह कथा विश्वसनीय है? यह विचित्र नहीं! विस्मयकारी तो नहीं! यह कथा लग-भग पांच हजार वर्षों से पहले घटित सत्य घटना है!

दो जगह तपस्या : आनन्दनिलय स्वामी ने एक बार नहीं, एक जगह नहीं। दो बार दो दिव्यस्थलों में तपस्या की। वह भी एक क्षेत्र में दस वर्ष तक, अन्य क्षेत्र में बारह वर्षों तक कुल मिलाकर 22 वर्ष तक निद्रा के बगैर, बिना आहार के, भगवान वेंकटेश्वर ने, तप किया था। किस के लिए? किस चीज के लिए? अर्थात् सभी भक्तों के लिए, विश्व कल्याण के लिए उन्होंने तपस्या की। आनंदनिलय स्वामी के कठोर तपस्या से अत्यन्त प्रसन्न होकर श्री अलमेलुमंगम्मा ने विश्व कल्याणकारिणी के रूप में अवतार लिया।

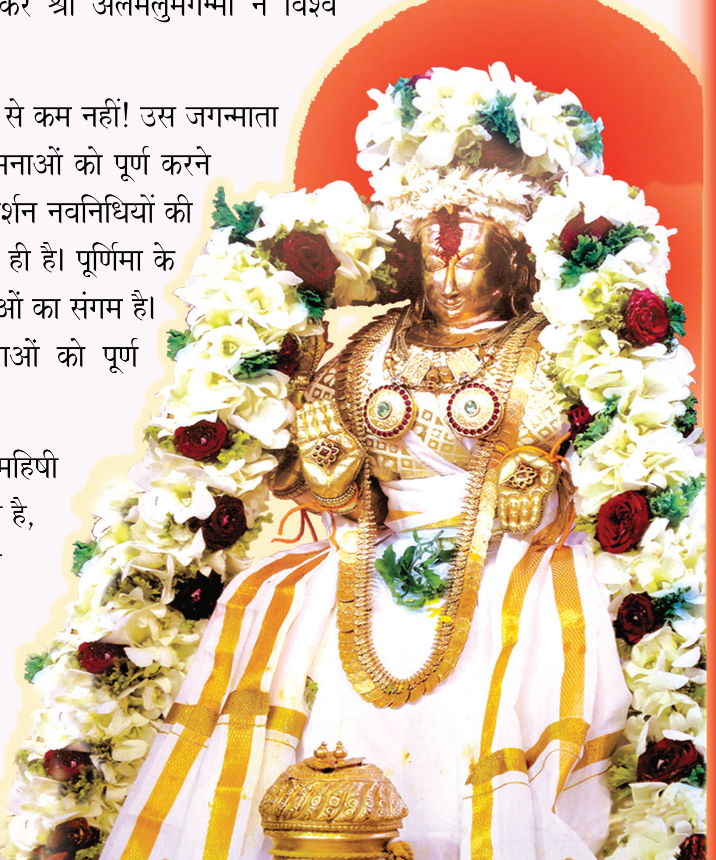

उस अलमेलुमंगा का कटाक्ष ही भक्तों के लिए किसी कामधेनु से कम नहीं! उस जगन्माता का पूर्ण मानस ही चिंतामणि समान है! उस माता के हाथ ही कामनाओं को पूर्ण करने वाले कल्पवृक्ष है। देदीप्यमान उस माता का दिव्यमंगल स्वरूप का दर्शन नवनिधियों की प्राप्ति है। वह माता जो कृपारस की वृष्टि करती है वह आनन्दामृत ही है। पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान विराजमान माता रानी का मुखकमल समस्त कलाओं का संगम है। इस प्रकार अनेक विशिष्टगुणों से विराजमान समस्त अभिलाषाओं को पूर्ण करनेवाली माता अलमेलुमंगम्मा की दिव्य कथा का आनन्द लेंगे!

अलमेलुमंगा की नगरी-तिरुचानूर : आनन्दनिलय स्वामी की पट्टमहिषी के रूप में माता लक्ष्मी जहाँ विराजमान है, वह तिरुचानूर है। इस क्षेत्र को 'अलमेलुमंगपट्नम्' भी कहते हैं। प्राचीन काल में लोग कहते हैं कि यहाँ पर श्री शुक महर्षि का आश्रम था! अतः यह 'श्रीशुकुनि ऊरु' (श्रीशुक का गाँव)

कहलाने लगा। कालक्रम में 'तिरुशुकनूरु' हो गया। बाद में 'तिरुच्चुकनूरु' हो गया। अंत में 'तिरुचानूर' कहलाने लगा। बुजुर्गों का कहना है।

इस गाँव के बीचों-बीच एक कमल सरोवर विद्यमान है। प्राचीन काल में इसी सरोवर से स्वर्णकमल से साक्षात् श्री महालक्ष्मी का अवतरण हुआ था। इसलिए देवी का नाम पद्मावती के रूप में विख्यात हुआ। अलमेलुमंगा के नाम से देवी प्रसिद्ध हो गई। अलमेलुमंगा का मतलब 'अलर्मेल्मंगा' है। इसका 'कमल पर विराजमान दिव्य वनिता' अर्थ है।

आनन्दनिलय स्वामी के दिव्य अस्मिता से विराजमान तिरुमल क्षेत्र जितना प्राचीन है, तिरुचानूर भी उतना ही प्राचीन है। वेंकटाचल जितना अद्भुत क्षेत्र है, तिरुमल जितना महिमान्वित हैं, अलमेलुमंगपट्टणम् भी उतना ही अद्भुत क्षेत्र है। अतः अलमेलुमंगम्मा भी बालाजी के समान अत्यंत महिमान्वित है।

कलियुग में सिर्फ भक्तों के लिए इस धरा पर सप्तगिरि के अधिपति का अवतरण हुआ। भृगु महर्षि के कार्य की वजह से लक्ष्मी के वियोग से परितप्त वेंकटेश्वर, भक्तों के अभिलाषाओं को पूर्ण नहीं कर सका। उसके कारण खिन्नता को प्राप्त किया। और खुद भी अनेक बाधाओं से पीडित हो गया।

तिरुमलेश की तपस्या : अतः वैकुण्ठ से क्रोधित होकर श्री महालक्ष्मी कोल्हापुर में बस गई। इस क्षेत्र में वेंकटेश्वर ने माता के अनुग्रह की प्राप्ति हेतु दस वर्ष तक तपस्या की। लक्ष्मी ने आकाशवाणी के माध्यम से यह सन्देश दिया कि वह उनको दर्शन देने वाली नहीं है। कोल्हापुर में दर्शन संभव नहीं है। परंतु पद्मसरोवर के तट पर तुम्हारी आकांक्षा पूर्ण होगी - इस प्रकार का आदेश देवी ने प्रदान किया। उस माता के आदेश के अनुसार, उनकी प्रसन्नता को प्राप्त करने के लिए, सुवर्णमुखी नदी के तट पर, पद्मसरोवर का

निर्माण कर, वहाँ पर बारह वर्षों तक वेंकटेश्वर ने कठोर तपस्या की।

अलमेलुमंगा का अवतरण : एक कार्तिक माह में शुद्ध पंचमी पर शुक्रवार को अभिजित् लग्न में, उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में, षोडश कलाओं के साथ पद्मसरोवर में, सहस्रदल पद्म में, श्री महालक्ष्मी का आविर्भाव हुआ। पद्मावती के रूप में, अलमेलुमंगा के नाम से, अवतरित उस महालक्ष्मी को, श्रीनिवास ने अपने वक्षःस्थल में धारण कर, संपूर्ण लक्ष्मी की कलाओं के साथ तिरुमल पर्वत की ओर प्रस्थान किया। महालक्ष्मी के रूप में अवतरित पद्मावती से सभी देवताओं ने निवेदन किया कि वे इसी स्थल पर अर्चामूर्ति के रूप में सभी की पूजाओं को प्राप्त करें। श्री महालक्ष्मी ने देवताओं से कहा- ''मैं यहाँ पर स्वतंत्र रूप से वीरलक्ष्मी के रूप में विराजमान हूँगी। जिस प्रकार तिरुमल क्षेत्र में श्रीनिवास को विभिन्न सेवाएँ हो रही है, उसी प्रकार सभी सेवाओं, उत्सवों का आयोजन यहाँ पर भी होना है'', इस प्रकार लक्ष्मी ने आदेश दिया।

लक्ष्मी ने कहा - ''श्रीनिवास बगल में नहीं हैं, अतः 'विरहलक्ष्मी' के रूप में, वीरलक्ष्मी के रूप में प्रसिद्धि को प्राप्त करती हुई, स्वतंत्ररूप से भक्तों की इच्छाओं को पूर्ण करूँगी। यहाँ सभी भक्तों की माँगों को पहले मैं सुनती हूँ। बाद में तिरुमल क्षेत्र में बालाजी के वक्षःस्थल पर मैं व्यूहलक्ष्मी के रूप में विराजमान होकर, भक्तों की अभिलाषाओं को प्रभु तक पहुँचाकर सफल बनाती हूँ।'' इस प्रकार देवी ने वरदान दिया।

तब से तिरुचानूर में अर्चामूर्ति के रूप में श्री महालक्ष्मी पद्मावती के नाम से, अलमेलुमंगम्मा के नाम से, स्वतंत्रवीरलक्ष्मी बन कर विराजमान हुई। पांचरात्रागम विधान में हर दिन पद्मावती का पूजन हो रहा है। अतः भक्तों का प्रथम कर्तव्य यही है कि श्री वेंकटेश्वर की प्रार्थना के अनुसार तिरुचानूर में 'स्वतंत्रवीरलक्ष्मी' के रूप में पूजित हो रही पद्मावती का दर्शन करना। उनको अपनी अभिलाषाओं का निवेदन जरूर करें। यह श्रेयस्कर है। उनकी पूजा भी आवश्यक है। इससे भक्तों की यात्रा पूर्ण हो जाती है।

भगवान जी का सुंदर रूप : आजकल अत्यधिक धनव्यय करके, भक्त यात्रा कर, सात पर्वतों को पार कर, तिरुमल पहुँचते हैं। उनको सिर्फ एक क्षण के लिए बालाजी का दर्शन संप्राप्त होता है। लोग भागदौड़ के साथ शंख-चक्रों से विराजमान, खड़े हुए बालाजी का दर्शन एक नहीं, हजारों भक्त करते हैं।

प्रभु भी अनेक उत्सवों की वजह से खुद भागदौड़ में हैं। दुर्लभ दिव्य मंगल स्वरूप का दर्शन कभी कभार मिलता है। जब क्षण मात्र के लिए मिल जाता है, उस सुदीर्घ सुन्दर मूर्ति के गांभीर्य, दर्प से प्रसन्नता को प्राप्त कर, उस हड़बड़ी में, जद्दोजहद में भक्त अपनी आकांक्षाओं को भूल जाते हैं। भीड़ भाड़ में धक्का खाते हुए दिव्य मंगल विग्रह का दर्शन ठीक तरह से नहीं कर पाते। देखने में असमर्थ होकर असंतृप्त मन से बाहर निकलते हैं।

और क्या? भक्तों के चित्त में एक प्रकार का अधूरापन रहता ही है। एक प्रकार की असंतुष्टि है जिसको बता नहीं पातें। अब इनको संतृप्ति कैसे प्राप्त होगी? इस समस्या का समाधान एक ही है। बालाजी के दर्शन से पहले पद्मावती माता का दर्शन करना, उनको अपनी प्रार्थनाओं को अवगत कराना, उन अभिलाषाओं को बालाजी तक पहुँचाने के लिए निवेदन करना। यह परम सत्य है। यह एक अद्वितीय मार्ग है। क्यों कि -

माता की सहन शक्ति अधिक है! क्षमागुण भी अत्यधिक है!!: तिरुचानूर में अलमेलुमंगम्मा चार भुजाओं के साथ शांत मुद्रा में बैठी हुई अभय, वरद हस्तों से दर्शन दे रही है। बालाजी की तरह नहीं, यह देवी आराम से बैठकर भक्तों के मनोरथों को सुनती है। भक्तों के सभी मनोरथों के समाचार को तिरुमल में प्रभु के वक्षःस्थल पर व्यूहलक्ष्मी के रूप में विराजमान होकर वह जगन्माता शांति से, प्यार से श्रीनिवास को बता देती है। इतना ही नहीं भक्तों के मनोरथों को आवश्यक रूप से पूर्ण करने के लिए श्रीनिवास पर दबाव डालती है। उनको अंगीकृत करने के लिए प्रेरणा प्रदान करती है। बच्चों के लिए माता की बात को नकारने वाला कहीं भी, क्या कोई पिता होता है? परिणाम स्वरूप देवी के आदेश का पालन करते हुए श्रीनिवास दुबारा भक्तों की प्रार्थना सुनने के बगैर ही अपने दर्शन मात्र से उनकी अभिलाषाओं को पूर्ण करते हैं। ऐसा करने के माध्यम से ''कलौ वेंकटनायकः'' की प्रथा को सार्थक बना लेते हैं।

'करुणारूपी' वजन : और एक बात! प्राचीन काल में उस तरफ आनंदनिलय, एक तरफ अलमेलुमंगम्मा दोनों एक ही ऊँचाई पर रहा करते थे। परंतु स्वामी की अपेक्षा माता की करुणा के वजन से धरती अंदर तक चली गई। अतः बालाजी अत्यंत ऊँचाई पर रह गयें। देवी बहुत ही नीचे रह गई। यह बुजुर्गों का कहना है। वास्तव में कितनी करुणा पूर्ण है देवी अलमेलुमंगम्मा!

विभिन्न सेवाएँ - उत्सव : अत्यंत करुणामूर्ति, प्रेम की प्रतिमूर्ति बनकर श्री महालक्ष्मी के नाम से, अलमेलुमंगा के नाम से अथवा पद्मावती के नाम से पूजन को प्राप्त करती हुई तिरुचानूर में विराजमान जिस दिन हुई तब से इनकी पूजा पांचरात्रागम के अनुसार होती है। सुप्रभात, सहस्रनामार्चन, पद्मावती परिणय, डोलोत्सव, एकांत सेवा जैसे नित्योत्सवों का आयोजन होता है। सोमवार को अष्टदलपादपद्माराधना, गुरुवार को तिरुप्पावड़ सेवा, शुक्रवाराभिषेक, शुक्रवारपु तोटा उत्सव, सहस्रदीपालंकार सेवा, शनिवार को पुष्पांजलि सेवा जैसे वारोत्सवों का आयोजन हो रहा है। वैशाख पूर्णिमा पर वसंतोत्सव, ज्येष्ठ मास पर प्लवोत्सव, भाद्रपद माह में पवित्रोत्सव, कार्तिक माह में लक्षकुंकुमार्चन, ब्रह्मोत्सव, पुष्पयाग जैसे वार्षिकोत्सवों का आयोजन पद्मावती के लिए अत्यंत वैभव के साथ, धूम-धाम से मनाया जाता है।

ब्रह्मोत्सव में वाहनों का वैभव : हर वर्ष कार्तिक माह में, अर्थात् सौरमान के अनुसार वृश्चिक माह में शुद्धपंचमी के दिन श्री

पद्मावती माता के अवतरण दिनोत्सव के सिलसिले में दस दिन तक ब्रह्मोत्सवों का आयोजन होता है। अंकुरार्पण से शुरू होकर 'पंचमीतीर्थ' में चक्रस्नान से समाप्त होते हैं। उत्सव के प्रथम दिन से हर दिन विविध प्रकार के वाहनों में श्री पद्मावती का दिन और रात, दो बार जुलूस निकालना प्रचलित है। नागदोष निवारिणी के रूप में, संतान प्रदात्री के रूप में महाशेषवाहन और लघुशेषवाहन में; विद्यालक्ष्मी के रूप में हंसवाहन में; संपदाओं को बरसाने वाली संपत् लक्ष्मी के रूप में कल्पवृक्षवाहन में जुलूस निकालते हैं। त्रेतायुग की वेदवती को आज की पद्मावती मानकर हनुमद्वाहन में; धनलक्ष्मी के रूप में पालकी वाहन में; गजलक्ष्मी के रूप में गजवाहन में; अखिलांडकोटि ब्रह्मांडनायकी के रूप में सर्वभूपालवाहन पर; विजयलक्ष्मी के रूप में गरुड़वाहन पर; आदिलक्ष्मी के रूप में सूर्यप्रभावाहन में; साम्राज्य लक्ष्मी के रूप में चन्द्रप्रभावाहन में; रथोत्सवों में अलमेलुमंगम्मा भक्तों को दर्शन देती है। अंतिम रूप से अलमेलुमंगा भवभयहारिणी के रूप में दर्शन देती है।

पंचमीतीर्थ उत्सव : पंचमी के दिन आखरी दिन है। यह माताजी का अवतरण दिन है। उस दिन तिरुमल के भगवान की तरफ से माताजी को हल्दी-कुकुंम, चंदन, साड़ी, प्रसाद को पैदल पथ पर, हाथी पर परंपरागत रीति से, मंगलवाद्य के ध्वनि के साथ, उपहार स्वरूप तिरुचानूर को ले आते हैं।

पंचमीतीर्थ का उपहार : श्रीनिवास की तरफ से भेजा गया हल्दी, चंदन, तुलसी से पद्मसरोवर के तट पर श्री पद्मावती माता के लिए तथा सुदर्शन भगवान के लिए 'तिरुमंजनं' अत्यंत वैभव के साथ चलता है। बाद में शुभ मुहूर्त पर सुदर्शन भगवान को पद्मपुष्करिणी में चक्रस्नान धूम-धाम से किया जाता है।

लोगों का कहना है कि उसी समय पर तिरुमलेश वहाँ पर उपस्थित होते हैं। उस समय पद्मसरोवर में हजारों लोग पवित्र स्नान कर पवित्र हो जाते हैं। परम दयार्द्र हृदया पद्मावती माता का पंचमीतीर्थ महोत्सव का दृश्य का वर्णन करना असंभव है। पर्याप्त शब्द नहीं है। मिलेंगे भी नहीं।

प्राचीन काल में वेदान्त देशिक नाम के एक महापुरुष रहा करते थे। उन्होंने एक जगह वर्णन किया है। साक्षात् श्रीनिवास भगवान का अनंत गुण दयागुण ही 'अलमेलुमंगम्मा' के नाम से अवतरित हुआ है। अतः एक तरफ वेंकटेश्वर की, दूसरी तरफ तिरुचानूर पद्मावती की स्तुति चाहे कितनी बार भी करें, दोनों एक ही हैं। उनमें से किसी एक व्यक्ति को नहीं, दोनों की प्रशंसा की जाती है। इस विषय को भूलना नहीं चाहिए। चाहे किसी की भी प्रशंसा करे, वह दोनों की प्रशंसा में परिवर्तित होती है। उनका दोनों का संबंध अविनाभाव संबंध है। सूर्य का सूर्यकिरणों के साथ, अग्नि का उष्णता के साथ, सागर का तरंगों के साथ - जो संबंध है, वही इन दोनों का है। अतः अन्नमाचार्य ने अपने कीर्तन में लिखा है -

वह तुम, तुम वह तुम्हारे वचनों का स्मरण करने पर उसका वचन, तुम्हारा हृदय वही है लो अलमेलुमंगा! तुम्हारे ही हाथ में सभी प्राणियों का जीवन है इस प्रकार सज्ञन मुनीश्वर स्तुति करते हैं तुम्हारी पत्नी का हे वेंकटेश्वर!

इस प्रकार अन्नमय्या ने दोनों की अभिन्नता का वर्णन किया है। अभिन्न, एक ही स्वरूप अलमेलुमंगा समेत श्री आनंदनियल स्वामी की प्रार्थना हम भी करेंगे।

"नारायणस्य हृदये भवती यथास्ते
नारायणोऽपि तव हृत्कमले यथास्ते,
नारायणस्त्वमपि नित्यमुभौ तथैव
तौ तिष्ठतां हृदि ममापि दयावति श्रीः"

माता! अलमेलुमंगम्मा! आनंदनिलय नारायण के हृदय में तुम हो! तुम्हारे हृदय में वह प्रभु रहते हैं। तुम दोनों मिलकर मेरे हृदय में कृपया निवास करें।

श्री पद्मावती देवी को श्री वेंकटेश्वर का उपहार

अलमेलुमंगा के अवतरण दिवस 'पंचमीतीर्थ' पर आनंदनिलय स्वामी तिरुमल से तिरुचानूरु को उपहार भेजते हैं। दो रेश्मी साड़ियाँ, दो रेशम की चोलियाँ, भगवान जी को समर्पित की गयी दो बडे गीली हल्दी गांठे, दो गीली श्रीगंध गांठे, हल्दी के हरे-पीले सींगों वाले पेड, पुष्पमालाएँ, तुलसी मालाओं के साथ दो स्वर्ण के आभूषण, इसके साथ स्वादिष्ट पदार्थ 51 बड़े लड्डू , 51 वड़ें, 51 अप्पम्, 51 दोसे... इत्यादि खाद्य पदार्थों को हाथी के वाहन में तिरुमल के श्रीनिवास के अर्चक, परिचारकवरेण्य, जिय्यंगार परंपरागत रीति से लाकर श्री अलमेलुमंगा को समर्पित करते हैं।

माता की कृपा हो तो बस! सब कुछ संप्राप्त होगा!

साहित्य का परमार्थ सामाजिक श्रेय है। समाज को भव्य व दिव्य ढंग से आगे बढ़ाना है। प्रगतिकारक बदलाव का स्वागत करना है। जीवन-माधुर्य का आस्वादन करना होगा। जीवन-यापन करना एक चतुरता है। जीवन को सार्थक बना लेना हमारा कर्तव्य है। भारतीय-संस्कृति, हैंदव-धर्मनीति; सामाजिक-जन-जीवन-विधान के मूल स्तंभ वेद, पुराण, इतिहास इत्यादि हैं। वेदों ने मानव-जीवन का अस्तित्व निर्देशित करते कहा - सच बोलना चाहिए; धर्माचरण करना चाहिए। पुराण व इतिहासों ने कथात्मक ढंग से मानव-जीवनोपयोगी वेद (यथार्थ ज्ञान) व वाद (सिद्धांत, व्याख्या) विवेचन पूर्वक बताया। वास्तव में इतिहास, पूर्ण गाथाओं से संबन्धित ग्रंथ हैं। वे ही रामायण, महाभारत, भागवत इत्यादि हैं। महर्षि वाल्मीकि ने श्रीमद्रामायण की रचना की तो वेदव्यास ने भारतम्, भागवत् आदि को हमें सौंप दिया।

ऊपर्लिखित साहित्य में से वशिष्ठा-गीता, भगवद्-गीता, उद्धव-गीता नामक प्रमुख साहित्य भागों ने हैंदव-समाज में अनेक परिवर्तनों का श्रीगणेश किया। ये बदलाव ही जीव के जन्मज-दुःखों के लिए सांत्वन बन गये। भक्ति रूपी आध्यात्मिक-भावना-साम्राज्य के द्वार खोले। जीन ही दैव है। जीवात्माएँ, परमात्मा की अपनी निजी हैं। दृश्यमान पृथ्वी नाशवान है। सत्य निरूपित करके, आत्म-तत्त्व का बोध कराकर, जन्म रहस्य का बखान करके, कर्म शिथिल होने के समय प्राणी (जीव) को मुक्ति पाने का मार्ग आविष्कृत करने वाला साहित्य, गीता साहित्य है।

वाल्मीकि महर्षि ने चौबीस हजार श्लोकों की रामायण तथा बत्तीस हजार श्लोकों की वशिष्ठ-रामायण लिखी। वशिष्ठ रामायण ने ही ''वशिष्ठ-गीता'' के नाम से ख्याति प्राप्त की। ''राज्य से, राज्य-भोगों से मुझे क्या प्रयोजन है? मैं कौन हूँ? मैं क्यों आया? - ऐसा विचार कर विरक्त हो, कर्तव्य न जानकर श्रीरामचंद्र वैराग्य मग्न हुआ। उस समय कुलगुरु वशिष्ठ ने श्रीराम को

इतिहास - गीता साहित्य

तेलुगु मूल - श्री के.बी.राजेंद्र प्रसाद
हिन्दी आनुवाद - श्री वेमूनूरि राजमौलि

मोक्षोपाय के रूप में, पारमार्थिक तत्त्व का बोधन ''वशिष्ठ-गीता'' के छः प्रकरणों द्वारा किया।

वशिष्ठ का गीतोपदेश सुनकर श्रीराम यह कहते युद्ध करने तैयार हुआ - कि ''हे गुरुदेव! मेरा अज्ञान दूर हुआ; मैंने आत्मज्ञान पाया; अब कर्तव्य-पालन करूँगा। हे अच्युत! आपके अनुग्रह से मेरे अज्ञान का नाश हुआ; आत्म-स्मृति मिली; संदेह दूर हुए; आपकी आज्ञा का पालन करूँगा।''

मानवाकृति में रहने वाले माधव को गीतोपदेश ने वशिष्ठ-गीता द्वारा ब्रह्म-विद्या-रहस्य बताये।

कुरुक्षेत्र संग्राम में साक्षात् श्रीकृष्ण परमात्मा द्वारा अर्जुन को बताया गया गीतोपदेश ही ''भगवद्गीता'' है। यह महाभारत के भीष्म पर्व में (701) सात सौ एक श्लोकों में दिखती है। उभय सेनाओं के बीच कन्हैय्या ने अर्जुन का रथ ठहराया। दोनों तरफ की सेना देखने वाले अर्जुन में एक प्रकार का ममकार उत्पन्न हुआ। यह सोचकर स्वधर्माचरण से विमुख हुआ कि ''ये मेरे भाई, बंधु, मित्र हैं। मुझे न विजय चाहिए और न राज्य-सुख। मुझे जीवन में राज्य-सुखों से कुछ भी प्रयोजन नहीं हैं। इनके लिए अपने लोगों का वध कर नहीं सकता।'' शोक संतप्त हो धनुर्बाण छोड़ दिये। तब श्रीकृष्ण ने विश्व-गुरु का अवतार लेकर अठारह प्रकरणों में मानव-जीवनाद को गीता-वेद के रूप में सुनाया।

हे अर्जुन! अधीर मत बनो; यह क्षत्रियोचित कर्म नहीं है; नीच, हृदयदौर्बल्य ठीक नहीं है; कर्तव्य-धर्म-निर्वहन के लिए धर्मयुद्ध करने उद्युक्त हो जाओ; ऐसा मोक्ष-संन्यास तक पूरा जीवन-धर्म व कर्म-मर्म सांगोपांग बताया। जोश में आकर अर्जुन युद्धोन्मुख हुआ।

आमतौर पर, धैर्य व उत्साह पैदा करने, मानसिक दौर्बल्य का निर्मूलन करने, आत्म-ज्ञानी हो, सत्य पहचान कर, स्वधर्माचरण करने के लिए उद्युक्त होने में गीतागानों ने बड़ा उपकार किया। इसी तरह ''सभी जीव एक ही हैं सारे जीवों के मन में विद्यमान परमात्मा एक ही है; निष्काम कर्म योग का पालन करना चाहिए; भक्ति योग का आलंबन लेकर मुक्ति-साम्राज्य में स्थान प्राप्त करना चाहिए; इसकेलिए काम, क्रोध आदि को त्याग करना चाहिए; इंद्रियों को वश में रख लेना चाहिए; कर्मों का नाश होने से ही मुक्ति प्राप्त हो सकती है;'' - ऐसे अनेक जीवन-सत्य गीताओं ने बताये।

अब महा भागवत में ''यदु-अवदूत-संवाद'' नाम से श्रीकृष्ण परमात्मा ने एक और गीता-गान किया। श्रीकृष्ण परमात्मा ने अपने बाल्य-मित्र, बड़े विज्ञान-खनि, उद्धव को यह गीता बतायी। वही ''उद्धव-गीता'' है। लग-भग हजार श्लोकों की है यह गीता। पोतना का शिष्य, नारायण ने इसे संक्षिप्त रूप से बताया।

गीता का अर्थ गान किया हुआ है। गीता साहित्य गान के अनुकूल है। संगीत, साहित्य; समन्वित है। हम गान से श्रोताओं और पाठकों को सहज ही मंत्रमुग्ध कर सकते हैं। इसलिए समाज ने गीता-गान का आदर किया। अनुसरण-किया।

उद्धव, ''वृष्णि'' वंश में श्रेष्ठ व्यक्ति था। अच्छे मन वाला और मधुर वचन बोलने वाला था। उसका बुद्धि-कुशलता की तुलना बृहस्पति की बुद्धि से की जा सकती है। लग भग सौ वर्ष श्रीकृष्ण के संग सह-जीवन माधुर्य का आस्वादन करने वाला महा सुकृति, उद्धव था। भागवत ने इसे स्पष्ट किया।

कुरुक्षेत्र संग्राम समाप्त हुआ। द्वापर के आखरी दिन आये। दुर्वास के शाप-वश द्वारका भी नाश होने का समय आसन्न हुआ। कलियुगारंभ की सूचनाएँ दृष्टिगोचर हो रही थीं। इतने में ब्रह्म आदि देवताओं ने आकर प्रार्थना की- ''हे स्वामी! भूभार को कम करने इस भुवि (भूमि) पर अवतरित होकर (125) एक सौ पच्चीस वर्ष बीत गये। अब आपको वैकुंठ पधारना होगा।'' यह सुनने वाला उद्धव चकित हुआ। ऐसा देखा कि ''हे स्वामी! मेरी गति क्या है?'' तब स्वामी ने उद्धव-गीता का श्रीगणेश करते कहा- ''हे उद्धव! हम सब कर्म के अधीन हैं। ये जन्म, कर्मों के कठपुतले हैं। तुम को यहीं रहकर मेरे पश्चात् भी आध्यात्मिक-ज्ञान समाज तक पहुँचाना होगा।''

कहते हैं कि एक संन्यासी शंकर के वेष में यदु राजा के पास आया। तब यदु राजा और अवधूत के बीच हुआ वार्तालाप ही, आध्यात्मिक-सुज्ञान रूप ''उद्धव-गीता'' है। इससे पहले के गीता गानों की तरह उद्धव गीता भी संवादात्मक, संभाषणात्मक है। साधक में जिज्ञासा पैदा करके ज्ञान-मार्ग की ओर ले जाने में कृतकृत्य हुई यह गीता ने।

मोह परवश हो मानव, संपत्ति जुटाने में डूब कर, किंकर्तव्य विमूढ हो, दुखित हो, अपने शरीर को शिथिल बना ले रहा है। वास्तव में अवस्था बढ़कर, आयु क्षीण होने पर पीडाओं का अनुभव करते, इंद्रियों के वश हो दुर्भर जीवन बिताने तैयार हो रहा है। किंतु सत्य को पहचान कर, मुक्ति पाने, ज्ञान-मार्ग का अनुसरण नहीं कर पा रहा है। वय (आयु), मन, आयुष (जीवनकाल), आरोग्य रहते वक्त ही अक्षर-परब्रह्म का आश्रय लेकर आराधना करनी चाहिए। किन्तु मानव भक्ति-ज्ञान-मार्गों का अनुसरण नहीं कर पा रहा है। आखिर में याने अंतिम अवस्था में भक्ति-मार्ग में या ज्ञान-मार्ग में चलना चाहे तो शरीर अनुकूल नहीं होता। अतः सभी अनुकूल होते समय है देव का आश्रय लेना चाहिए। उद्धव गीता में कबूतर की कथा, वेश्य की कथा, कन्या-रत्न की कथा नामक तीन आख्यानों का वर्णन मिलता है।

किसी जंगल में एक कपोत राजा रहता था। उसकी एक-पत्नी थी। उन कपोतों की जोड़ी के कुछ बच्चे भी थे। आध्यात्मिक चिंतन छोड़कर बाल बच्चों के साथ गृहस्थी करते, परिवार की उन्नति के लिए सतत समय बिता रहा था। इतने में एक शिकारी के जाल में पत्नी एवं उसके बच्चे फँस गये। ममता रूपी संसार-सागर में डूबने वाला कपोत राज दुःखी हुआ। किन्तु जीवन-सत्य पहचान न सका। आप भी ममकार रूपी जाल में फँस कर कृषित हुआ। ममकार-बंधन में फँसे जीव को मुक्ति नहीं मिलती। अवश्य दुःख ही प्राप्त होता है।

मिथिला नगर में पिंगला नामक वेश्या रहती थी। वह बड़ी सुंदरी थी। उसे धन की आशा थी। सौंदर्य के जाल में विटों को फँसा कर स्वेच्छा से विचरन करती थी। शरीर कृषित होने तक खूब कमाया। अब वह थक गयी। वृद्धावस्था आ पड़ी। उसने मुडकर पिछले जीवन-काल की ओर ताका। सारा अंधकारमय महसूस हुआ था। संपत्ति है;

किन्तु आरोग्य नहीं है। जीवन का माधुर्य नहीं है। ‘‘यह जीवन किस लिए? क्या हासिल किया? फिर से मुझे यह जन्म नहीं चाहिए।’’ ऐसा उसने सोचा। उसमें आत्मज्ञान पैदा हुआ। नारायण का नाम-स्मरण ही जीवन का आधार है। सभी छोड कर उस वासुदेव के पाद-पद्मों का आश्रय लिया। परतत्त्व पर मन लग्न करके मुक्ति पायी।

कनकवतीपुरम में एक ब्राह्मण कन्या रत्न रहती थी। वह रूपवती और गुणवती थी। वह प्रति दिन सुवर्णाभरण धारण करती थी। एक दिन उसके घर कुछ अतिथि आये। समय पर खाना पकाने चावल नहीं था। धान कूटकर चावल तैयार करना चाहा। किंतु धान कूटते समय अपने हाथों के कडे एवं शरीर पर के आभरणों से ध्वनि निकल रही थी। यह सोचकर कि ‘‘यदि अतिथि - यह ध्वनि सुने तो ठीक नहीं होगा’’ - एक कडे को छोडकर सारे आभरण उतार कर धान कूटा।

ऐसा कहा जाता है कि यदि हम भगवदायत्त (भगवान को पाने संसिद्ध होना) होना चाहे तो विषय-वासनाओं और अन्य चीजों को ताक पर रख देना चाहिए; प्रसन्नचित्त बनने चाहिए। तभी मुक्तसंग हो मोक्ष-साधक बनेंगे।

ऐसा, सुंदर कथाओं से उद्धव-गीता कमनीय ढंग से चलती है। उद्धव के सारे प्रश्नों का सुंदर समाधान श्रीस्वामी ने दिया। वे कहते हैं कि प्रकृति से हमें बहुत-कुछ सीख लेना है। स्वामी ने सत्य, अहिंसा, भूत दया आदि भागवत धर्म बताये। परमात्मा के प्रति की भक्ति, परमानंद, सुख, प्रशान्तता पहुँचती हैं।

भगवतत्त्व को अनुभव में लाना है। इसलिए इंद्रियों पर विजय पानी चाहिए। याने इच्छाओं को छोडना चाहिए। अपने-पराये का भेद-भाव, ममता, बंधु-बांधवों के प्रति प्रेम, संपत्ति जुटाना आदि भावनाएँ मन में नहीं होनी चाहिए।

इस प्रकार श्रीकृष्ण परमात्मा ने ‘‘उद्धवगीता’’ द्वारा समाज को सुंदर मार्ग दर्शन किया। श्रीकृष्ण के निर्याण के अनन्तर उद्धव ने अपने को सौंपे गये ज्ञान-बोधन-कार्यक्रमों को निभाया।

विश्व-साहित्य में भगवद्गीता, वशिष्ठ गीता, उद्धवगीता के अतिरिक्त बुभुगीता, भीष्मगीता, अष्टवक्रगीता जैसी अनेक गीताएँ हैं। सभी आध्यात्मिक-साम्राज्य के द्वारा खोलने वाली ही हैं। मानव के अस्तित्व की यथार्थता, प्रवचित करने वाली ही हैं। इनमें से वशिष्ठ गीता, भगवद्गीता, उद्धवगीता श्रेष्ठ हैं।

इन तीनों में से भगवद्गीता ने तो विशेष प्राचुर्यता प्राप्त की। भाषा में सरलता, भावों में स्पष्टता, साहित्य में सौजन्य शीलता जैसे विलक्षणों के कारण भगवद्गीता ने पाठकों को खूब आकर्षित किया। यह एक मानव शास्त्र है। धार्मिक-ग्रंथ है ही नहीं। यह सार्वजनीन एवं सार्वकालिक है।

मानव जन्म प्राप्त करने वाला प्रत्येक व्यक्ति को अवश्य कम से कम एक बार तो भी गीता का पठन अवश्य करना चाहिए। यह अक्षर-सत्य (शतशः सत्य) है कि नित्य जीवन में उत्पन्न होने वाली प्रत्येक समस्या का समाधान भगवद्गीता दे सकी। इसमें कोई माया नहीं; मंत्र नहीं। माया का परदा हटा कर परमात्म तत्त्व बताने वाली है भगवद्गीता।

भगवद्गीता माता की भाँति गोद में लेकर सांत्वना दिलाती है। इसलिए हम प्रति वर्ष ‘‘गीता जयंती’’ मनाते हैं। पीढ़ियाँ बदले तो भी, हमारे ललाट पर लिखित विषय को भी पोंछकर (बदलकर) सुज्ञान-कौमुदी-मार्ग पर मानव-जाति को चलाती है भगवद्गीता। गीता गान ही मानव-जाति के वेद हैं। इन वेदों को सुनना, पढ़ना हमारी सुकृति है।

(गतांक से)

श्री वेंकटाचल की महिमा

(हिंदी गद्यानुवाद)

चतुर्थ आश्वास

तेलुगु मूल
मातृश्री तरिगोंडा वेंगमांबा

हिंदी अनुवाद
आचार्य आई.एन.चंद्रशेखर रेड्डी

श्रीहरि के द्वारा निर्धारित बल की परीक्षा :

रमेश ने तब कार्यार्थी बन कर हँसते हुए पवन और शेष को देखकर इस रूप में कहा। 'सुनो! तुम दोनों बडे वीर हैं। इसलिए एक दूसरे पर विजय प्राप्त नहीं कर सकते। इसलिए अगर तुम दोनों बिना किसी बाजी के लडने से वह लोक हित में नहीं होगा। इसलिए मैं आप को एक उपाय बताता हूँ। वह ऐसा है कि हे शेष! कनक पहाड के रूप में स्थित वर वेंकटाद्री को चारों ओर से तुम लपेट लो। उसे दबा कर अपने कब्जे में हिले डुले रखो। तब हे पवन! तुम अपनी शक्ति से उसे उडा देने की कोशिश करो। अगर पवन उसे उडा देगा तो पवन शेष से बलवान समझा जाएगा। पवन से यह भी कहा हे पवन! तुम वर वेंकटाद्रीगिरि को पकड कर ऊपर उठाकर उडादोगे तो तुम बलवान समझा जाएगा। तब तुम ही बडा साबित हो जाओगे।' विष्णु की इस आज्ञा को शेष और पवन दोनों ने सुना। उसे 'महाप्रसाद' समझ कर दोनों चक्री को नमस्कार करके वेंकटाद्री पर पहुँच गए। तब पन्नगेंद्र ने वेंकटाद्री को चारों तरफ से घेर कर अपने सहस्र फणों से उसे दबा कर रखा। तब पवन अपनी निज शक्ति को बढा कर उस गिरि पर तीव्र गति से बहने लगा। इस रूप में दोनों अपनी-अपनी शक्ति के बल पर कभी छोडते, कभी पकडते, गिरि को यथा स्थान पर रखने की कोशिश करते रहे। दोनों के इस संघर्ष से धरती समेत पूरा ब्रह्मांड कांपने लगा। ब्रह्मादि भयकंपित हो गए। तब ब्रह्मादि सब मिल कर पवन के पास आकर बहुत चिंता करते हुए प्रार्थना की कि अपने प्रभंजन को रोको।

ब्रह्मादि की विनति :

"हे वायु देव! आप उत्पात पहुँचाने के रूप में बहने का यह सही समय नहीं है। कल्पांतर समय में ही ऐसा करना चाहिए। अब ऐसा नहीं करना चाहिए। तुम रुको।" इस रूप में प्रार्थना करने पर पवन अपने रोष को छोडने के बिना फिर बार-बार प्रभंजन के रूप में बहने लगा। तब पवन के रोष भाव को समझ कर ब्रह्म इंद्रादि शीघ्र ही शेष के पास पहुँच गए। शेष से उन्होंने विनति की। "हे भासुरात्मा! तुम्हारा बल बहुत बडा है।

तुम्हारे बल के बारे में नीरजाक्ष और गौरी मनोहर को अच्छी तरह मालूम है। हम भी जानते हैं। तुम्हारे प्रभाव के बारे में बताना किसी को संभव है?'' कहते बहुविध उन्होंने प्रार्थना की। किंतु शेष ने भी जिद नहीं छोडा। शेष के स्वभाव को देखकर ब्रह्म इंद्रादि ने इस रूप में कहा।

'हे भुजगाधिपा! हमारी बातों को सुनो। बडे रोष से तुम हेमगिरि पुत्र को बल के साथ दबा कर रखने से पवन तुम को हिला नहीं सकता है। हे महात्मा! पवन तुम से बडा नहीं है। वैसे ही तुम भी पवन से बडे नहीं हो। तुम दोने के कारण जगत नष्ट हो रहा है। इसलिए तुम अपने रोष को दबाकर जनों की रक्षा करो। हे शेष! अनुज को मूर्ख समझ कर उन्हें छोडते हुए सात्विक मूर्ति बन कर तुम विष्णु पद के आश्रय में जाकर परिशुद्ध बन गए हो। अब तुम को क्रोध क्यों है? अपने निज शुद्ध बल से तुम इस पर्वत को अपने फण फैलाकर हमारे लिए पवन को जीतने देना अच्छा है।' कहते अनेक प्रकार से ब्रह्म इंद्रादि की प्रार्थना करने पर शेष करुणार्थ चित्त बन कर लोकरक्षणार्थ अपना एक फण ऊपर उठाया। तब उत्साह से पवन ने फूल कर शीघ्र उस फण में प्रवेश करके अपने निज बल से बहना शुरू कर दिया। अपने एक अंगुष्ट से उस पर्वत घुसाकर ऊपर उठाकर उडा दिया। तब वेंकटाद्री पतंग की तरह उड कर गंगा नदी के दक्षिण में द्विशत योजन दूरी पर, पूरब में सागर से पाँच योजन की दूरी पर सुवर्णमुखी नदी के उत्तर तट से अर्ध क्रोश दूरी पर पुण्य वन प्रदेश में अपने से लिपटे शेष समेत जा गिरा।

इस प्रकार शेष को हरा दिया समझ कर संतोष के साथ पवन ने अपने बल को वापस लिया। जग सारे मुक्त हो गए। तब अपनी हार से चिंता करनेवाले शेष के पास ब्रह्म, इंद्रादि ने पहुँच कर उन का आदर किया। तब ब्रह्म ने इस रूप में कहा।

ब्रह्म के द्वारा शेष को अभय प्रदान करना :

''हे शेष! सुनो। पवन से हार गया, ऐसा सोचकर चिंता मत करो। वेंकटगिरि को अपना बना कर तुम धरती पर रहो। चक्रपाणी तुम पर वास कर के पालन करेगा।'' यह सुन कर शेष ने बहुत विनय के साथ इस रूप में कहा। ''मैं पवन से झगड़ा करके हार जाना मेरी गलती है। मेरा गर्व चकना चूर हो गया। मेरे कर्म के अनुसार ही यह हुआ है। अब किस रूप में श्रीधर मुझ पर वास करेंगे?'' कहते शेष की आंखों में आँसू आ गए। उस की स्थिति को देखते हुए दया से ब्रह्म ने कहा।

''हे फणीश्वर! सुनो। तुझ पर वनजाक्ष आकर बसने के कारण और अवसर की खोज मैं करूँगा। तुम अपने मन से चिंता को निकाल दो। हरि तुझ पर अब नहीं बसेंगे, ऐसा विचार तुम्हारे मन में क्यों आया?

अक्तूबर-2024 महीने का क्विज-27 के समाधान

1) इमली के पेड,

2) श्री बालाजी / श्री वेंकटेश्वर स्वामीजी,

3) भोग-श्रीनिवास मूर्ति, 4) कल्याणकट्टा,

5) सिंहवाहन, 6) श्री स्वामिपुष्करिणी,

7) श्री वराहस्वामी, 8) हनुमान,

9) कल्पवृक्ष, 10) श्री पद्मावती देवी,

11) गरुत्मंत, 12) विनता, 13) कश्यप,

14) श्री महाविष्णु, 15) वकुला माता.

आगे चक्रधर यहाँ पर आने के प्रयत्न मैं करूँगा। तुम यहाँ पर गिरि के रूप में रहो। हार जाने की चिंता को छोड दो। पंकजाक्ष को मन में स्मरण करते हुए हे नागाधिपा! सुखी रहो। हरि को यहाँ पर लाने का मैं वचनबद्ध हो गया हूँ।'' कहते ब्रह्म ने शेष के सिर पर सम्हलाते हुए करुणा से शांत करने का प्रयास किया।

शेषाद्री का परिमाण और प्रभाव :

शेष को इस रूप में अभय देकर उसे बिदा करके इंद्रादि देवतागण अपने अपने स्थलों पर लौट गए। ब्रह्म अपना सत्य लोक पहुँच गए। तब शेष ने वैकुंठपति को साष्टांग दंड प्रणाम करके पर्वताकार को प्राप्त किया। उस पर्वत के परिमाण के बारे में बताना है तो दस योजन विस्तीर्ण में वह पर्वत फैला हुआ है। तीस योजनाओं की लंबाई है। शेष के आकार में रहनेवाले इस बृहद पर्वत को 'सिरोभाग - वेंकटाद्री; मध्य प्रदेश - अहोबिल; पूँछ भाग - श्रीशैल है।' ऐसे पर्वत पर सर्व क्षेत्र, सर्व तीर्थ, सकल फल-पुष्पों के पौधे और लताओं से शोभित है।

उस पर नाना धातुओं के होने से विचित्र रूप से वह प्रकाशवान है। उस पर्वत पर देवताओं के बृंद वृक्षों के बृंद के रूप में, ऋषि समूह मृग समूह के रूप में, पितृ गण खग समूहों के रूप में, यक्ष-किन्नेरादि पाषाण समूह के रूप में उस पुण्य पर्वत पर आश्रित थे। शेष को

वरदान देकर लौटे ब्रह्म ने वराह स्वामी से 'शेषाद्री पर बसे रहिए।' प्रार्थना करने पर, उस देव ने गरुड के द्वारा वैकुंठ में रहनेवाले क्रीडाचल को शेषाद्री पर स्थापित करवाया। स्वयं स्वामी शेषाद्री पर रहने लगे। इस स्वामी के पूर्व भाग में पवित्र पुष्करिणी गंगादि पुण्य तीर्थों का जन्म स्थान बन गया।

वहाँ पर मकर, मत्स्य, कच्चप आदि जलचरों का वास बन कर, कमल, कुमुद आदि पुष्पों से सुशोभित सरस्वती सरोवर के रूप में प्रचलित हो गया।

उस पुष्करिणी में स्नान करनेवाले जन पापरहित होंगे। इससे बढ कर धनुर्मास में शुद्ध द्वादशी के दिन अरुणोदय से लेकर छे घडियों तक गंगा आदि पुण्य नदी इस पुष्करिणी में मौजूद रहती है। ऐसे पुण्य काल में उस तीर्थ में श्रद्धा पूर्वक स्नान करनेवाले मोक्ष पाने के योग्य बनते हैं।

इससे अलग उस तीर्थ के तट पर श्राद्ध करनेवाले लोगों के पितृ देवताण अमृत पान करने की तृप्ति प्राप्त करते हैं। वे स्वर्ग में नाचते रहते हैं।

इससे अलग नारायण नामक एक ब्राह्मण ने इस पुष्करिणी में स्नान करके हरि के दिव्य धाम को प्राप्त किया था। यह शेषाद्री का प्रभाव है। अब वेंकटाद्री के प्रभाव के बारे में इस रूप में बता सकते हैं।

क्रमशः

तिरुप्पावै - गोदादेवी द्वारा ईश्वर प्राप्ति मार्ग

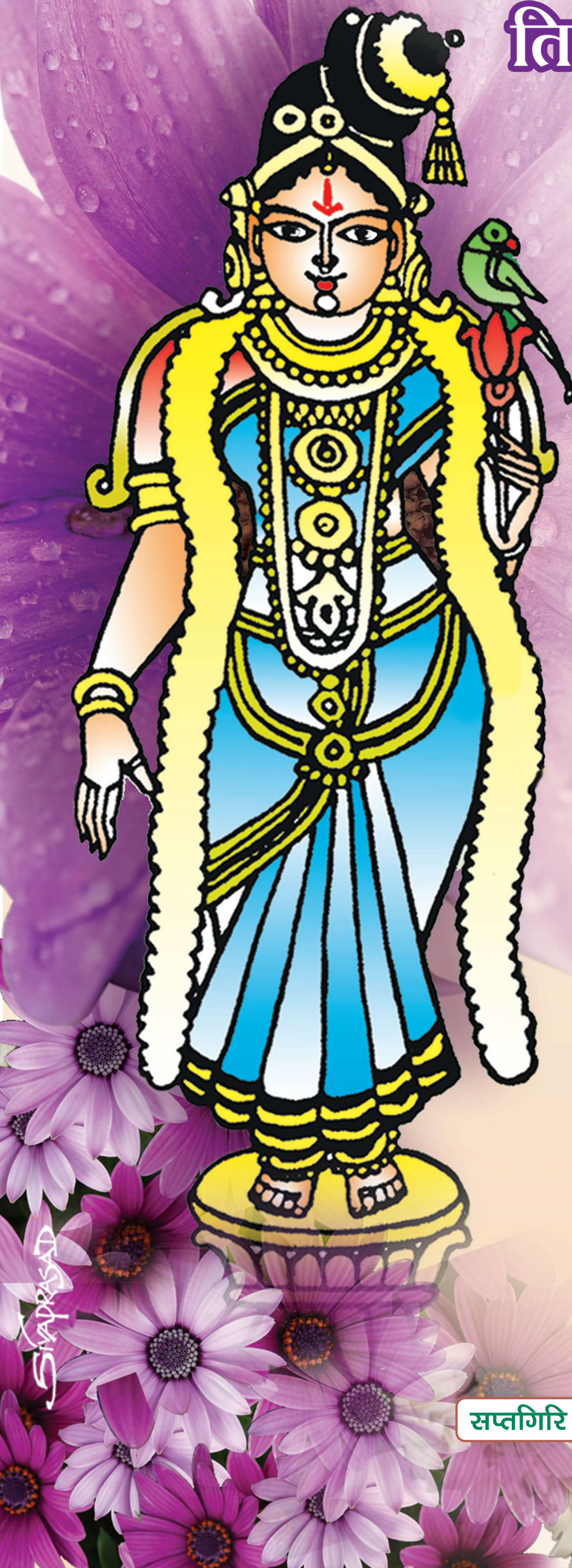

- श्री देवपूजला राजकुमार

श्रीकृष्णदेवराय द्वारा रचित आमुक्तमाल्यदा(तेलुगु) के अनुसार वैकुंठ में एक बार योगनिद्रा से उठते समय भगवान श्री महाविष्णु से भूदेवी ने पूछा कि हे प्रभु! आप किससे सबसे ज्यादा प्रेम करते हैं, इस पर भगवान ने कहा जो मेरी भक्ति निष्काम भाव से करता है मैं उसीसे सर्वाधिक प्रेम करता हूँ। इस पर भूदेवी जी ने उनसे वरदान मांगा कि मैं भी उस निष्काम भक्ति को करना चाहती हूँ अतः मुझे भूलोक पर अवतार लेने का वरदान दे। भगवान ने उन्हें वरदान दे दिया।

इसी वरदान के अनुसार कलियुग के आरंभ में 'नल' वर्ष के कर्काटक महीने के शुद्ध चतुर्दशी के दिन पूर्व फाल्गुनी नक्षत्र की शुभ वेला में तुलसी वन में माता गोदादेवी का आविर्भाव हुआ। तमिलनाडु के श्रीविल्लिपुत्तूर में ब्राह्मण विष्णुचित्त (पेरियाल्वार) को यह अयोनिजा सुकुमार बालिका पुष्प वाटिका में प्राप्त हुई।

तत्क्षण विष्णुचित्त (पेरियाल्वार) ने उस नन्ही-सी बालिका को कुदै यानी सुम मालिका कहकर अपने हृदय से लगा लिया। वे विष्णु के परम भक्त थे, उन्होंने उन जगन्माता महालक्ष्मी अवतार गोदादेवी का बड़े ही स्नेह, लाड़ प्यार से पालन-पोषण किया। सदा आध्यात्मिक तरंगों से परिपूर्ण उनकी कुटिया में गोदादेवी पलने लगीं। उनके मन में भी भगवान के प्रति भक्ति भाव उमड़ने लगा। पिता विष्णुचित्त बड़े ही श्रद्धा एवं विश्वास के साथ अपनी प्यारी पुत्री गोदादेवी को भगवान श्रीकृष्ण की लीलाओं की कथाएँ बड़े ही रुचिकर रीति से सुनाया करते थे।

विष्णुचित्त श्रीविल्लिपुत्तूर के श्रीरंगनाथ स्वामी का सुंदर-सुम मालाओं से अलंकार किया करते थे। गोदा भी इस कार्य में जुटने लगी वह वाटिका से विभिन्न परिमलभरित सुमन चुनकर लाती और श्रीरंगनाथ के लिए मालाओं का निर्माण करती थी इस प्रक्रिया में धीरे-धीरे गोदा के मन में श्रीरंगनाथ के प्रति प्रेम भाव उत्पन्न होने लगा, वे उनके साथ प्रणय की कल्पना करने लगी। बालिका से कौमार्य और यौवन कन्या के रूप में गोदा श्रीरंगनाथ के प्रेम में पूरी तरह सरोबार हो गई। वह मालाओं का अद्भुत रीति से गूंथने लगी, मालाओं की सुंदरता के साथ-साथ उनका प्रेम भी गहन होता चला गया। पिता श्रीविष्णुचित्त जी द्वारा सुनाई गई विष्णु गाथाएँ, अष्टोत्तर शतनाम, वैष्णव दिव्यदेशों की महिमाएँ, विशेषतः सुंदरवल्ली नाच्चियार समेत अलगर पेरुमाल, वटपत्रशयनर, तिरुवेंकटमुडैयान (तिरुमलै) की विशेषताएँ गोदा को अत्यंत प्रभावित दिखाया है। 'स्त्री प्राय मितरम् जगत्' जगत के सभी जीव स्त्री और केवल भगवान को ही पुरुष के रूप में कल्पना करना प्रेम की पराकाष्ठा है।

गोदादेवी ने श्रीकृष्ण को ही अपना पति मान लिया था। गोदा ने भगवान श्रीकृष्ण से विवाह करने का निर्णय ले लिया था वह भगवान श्रीकृष्ण पर अपना अधिकार समझने लगी इसी के तहत वे विष्णुचित्त द्वारा बनाई गई सुमन मालिकाओं को अपनी वेणी में सजाती थी और यह कल्पना करती थी के वे स्वयं महान लीलाधारी गोपी वल्लभ श्रीरंगनाथ रूप में श्रीकृष्ण से विवाह करने योग्य अवश्य हैं। वे कुएँ के पानी के दर्पण में अपने सौंदर्य को निहारती और भगवान श्रीकृष्ण के प्रेम में विभोर होने लगती। पुत्री की इस चेष्टा से अनिभिज्ञ विष्णुचित्त प्रतिदिन पुष्पमालाओं को श्रीरंगनाथ हेतु ले जाया करते थे उनका अलंकार करते थे। एक दिन उन्होंने उन मालाओं में नीला केश देखा उस केश को देखने पर उन्हें उसकी कोमलता एवं दीर्घता से यह ज्ञान हुआ किया वह किसी स्त्री का केश है और उनके घर में केवल गोदादेवी ही थी उन्होंने गोदा से पूछा तो गोदा ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया, विष्णुचित्त ने भगवान श्रीरंगनाथ से अपने पुत्री के इस अपराध के लिए क्षमा मांगी और उन्होंने उस दिन पुष्पमाला अर्पित नहीं की, इस पर उस रात्रि भगवान श्रीरंगनाथ ने विष्णुचित्त के स्वप्न में आकर कहा कि मुझे गोदा द्वारा अलंकृत माला ही अच्छी लगती है मुझे गोदा द्वारा अलंकृत माला ही अर्पित किया करो। उस दिन विष्णुचित्त को अपनी पुत्री के पवित्र प्रेम का आभास हुआ और उसी दिन से गोदादेवी चूडिक्कोडुत्त नाच्चियार (अपने द्वारा अलंकृत पुष्पमालाओं से श्रीरंगनाथ को अलंकृत करनेवाली) कहलाई जाने लगी। अब दिन प्रतिदिन गोदादेवी का भगवान श्रीरंगनाथ के प्रति प्रेम बढ़ता चला गया विरह वेदना में उन्होंने श्रीमद्भागवत पुराण में वर्णित 'कात्यायनी व्रत' के द्वारा भगवान श्रीरंगनाथ को प्राप्त करने का निर्णय लिया। इस दशा में गोदादेवी द्वारा 30 कविताओं की रचना की गई जिन्हें पाशुर कहते हैं वे मनोज्ञ, सहज, सरल एवं भक्ति में तल्लीनता के प्रतीक हैं। इन पाशुरों के संकलन को ही 'तिरुप्पावै' ग्रंथ कहा गया है। यह तिरुप्पावै ग्रंथ उपनिषदों

का सार है इसमें गोदादेवी ने प्रभु को प्राप्त करने के विधान बताएँ हैं। इन पाशुरों के माध्यम से उन्होंने भगवान के चरणों में अखंड भक्ति करने का संदेश दिया है और यह बताया है कि हमारे जीवन का उद्देश्य केवल भगवान के प्रेम की प्राप्ति ही है। तिरुप्पावै में गोदादेवी पुमालै यानी पुष्प मालाएँ एवं पामालै यानी सूक्ति मालाएँ दोनों को शोभायमान रीति से गूंथने में बड़ी ही कुशल दिखाई देती है। गोदा एक ब्राह्मण कन्या थी परंतु वे गोपी वनिताओं की वेशभूषा, उनकी भाषा, वार्तालाप, मनोभावों को अपनाने लगी। श्रीविल्लिपुत्तूर को ही गोकुल, वहाँ की कन्याओं को गोप वनिताएँ, वहाँ के वडपेरूम मंदिर को ही नंद गोप का गृह, वटपत्रशायी स्वामी को ही श्रीकृष्ण मानकर विभोर होने लगी। गोपी वनिताओं की शरीर गंध भी गोदा में आ गई। वेद, उपनिषद, पुराण आदि की सूक्तियाँ भी गोदा के प्रेम की पराकाष्ठा को, मधुर भक्ति से भरपूर उत्कृष्ट प्रेम अवस्था को देखकर तिरुप्पावै में स्थान पाने के लिए तरसने लगी। अपने उद्धेश्य की पूर्ति के बाद गोदादेवी संस्कृत एवं तमिल साहित्य के 'संगम गंगा' के रूप में अमर हो गईं।

गोदादेवी की इस दिव्य रचना तिरुप्पावै का अनुष्ठान धनुर्मास में तिरुमल में प्रारंभ करवाने का शुभ कार्य श्री भगवद्रामानुजाचार्य ने 14वीं शताब्दी में किया था जो आज तक निर्बाध रूप से चलता चला आ रहा है। धनुर्मास में भगवान श्री वेंकटेश्वर स्वामी के वक्षःस्थल पर स्थित लक्ष्मी जी को गोदादेवी यानी कि माता आंडाल के रूप में विभूषित किया जाता है। अरुण वर्ण के रत्नों से जड़ित स्वर्णशुक आभूषणों से गोदादेवी के दक्षिण हस्त को अलंकृत किया जाता है। स्वामी के दक्षिण पार्श्व को सुमनों से बने शुक से अलंकृत किया जाता है। धनुर्मास के प्रतिदिन तिरुप्पावै के पाशुरों का गायन किया जाता है। इस प्रकार 30 दिनों तक 30 पाशुरों का गायन किया जाता है।

धनुर्मास में श्रीकृष्ण के रूप में भगवान श्री वेंकटेश्वर बालाजी को क्षीरान्न, मुद्गान्न, दध्योदन नैवेद्य समर्पित करके सेवा की जाती है। मकर संक्रांति के द्वितीय दिवस कनुमा के दिन माता गोदा कल्याण बड़े श्रद्धा एवं धूमधाम से मनाया जाता है। इसका प्रवर्तन भी श्री भगवद्रामानुजाचार्य ने किया था। तिरुप्पावै की मनोहारी व्याख्या करने के कारण उन्हें तिरुप्पावै जीयर के नाम से सम्मानित किया जाता है। इतना ही नहीं ब्रह्मोत्सव में गरुड़ उत्सव के दिन श्रीविल्लिपुत्तूर से आंडाल माता को अलंकृत किए गए पुष्पमालाएँ लाकर भगवान श्री वेंकटेश्वर स्वामी को अलंकृत किया जाता है, इस प्रथा के प्रवर्तक भी श्री भगवद्रामानुजाचार्य ही हैं। गोदा-आंडाल विरचित तिरुप्पावै की विशेषता श्री भगवद्रामानुजाचार्य के शब्दों में इस प्रकार वर्णित है :

पातकंगल तिर्कुम परम् नडि कट्डम्

वेदमनैत्तुक्कुम् वित्ताहुम् कोदै तमिळ

ऐय्यैन्दुम् एन्दुम् अरियाद मानिडरै

वैय्यम् सुमप्पदुम् वम्बु

वेदों का सार है तिरुप्पावै! इसके दैनिक पारायण से पापों का नाश हो जाता है और हम ईश्वर के समीप जाते हैं। अत्यंत सरल भाषा में विरचित तिरुप्पावै के बारे में न जानने वाला मनुष्य, मनुष्य नहीं कहा जा सकता, ऐसे व्यक्ति का भार सहन करने में भूमाता को अत्यधिक वेदना होती है।

यह अकाट्य सत्य है, तिरुप्पावै केवल गोदा-आंडाल की भाव अभिव्यक्ति ही नहीं है अपितु यह भक्तों में सर्वश्रेष्ठ गोप कन्याओं की पवित्र भक्ति को भी प्रतिबिंबित करता है। 'कात्यायनी व्रत' के द्वारा गोप कन्याओं ने भगवान श्रीकृष्ण का सानिध्य पुनःप्राप्त किया एवं गोकुल एक बार फिर से शस्य श्यामल होकर आनंदमय नवजीवन प्रदान करने लगा।

गोदा-आंडाल अपने श्रीकृष्ण को केशव, माधव, नीलमेघश्याम, वैकुंठपति, नारायण, श्रीराम, कमल नयन, मणिवर्ण, देवाधिदेव, माखन चोर आदि नामों से संबोधित करते हुए विभोर हो जाती हैं। केवल भक्ति ही नहीं, गोदा-आंडाल की रचनाओं में रसपूर्ण जीवंत रचना शैली से रसमय प्रस्तुति, भाषा की सतर्कता, गोपियों के वार्तालाप को प्रस्तुत करने में मनोवैज्ञानिक रीति, नवीनता, प्रकृति को परखने एवं उस सहजता को रचना में ढालने की दक्षता, पूर्व आचार्यों के प्रति विनय, वैष्णव सिद्धांतों का ज्ञान, सामाजिक मर्यादाओं का विवेक इत्यादि पाठकों को चकित कर देने वाले अंश हैं।

'ॐ नमो नारायणाय' अष्टाक्षरी मंत्र का माहात्म्य, भगवान के नाम एवं अवतारों में अभिन्नता स्थापित करते हुए गोदा-आंडाल ने भगवान के एकत्व को बड़ी ही कुशलता एवं विज्ञता से इस रचना में निरूपित किया है। परमात्मा के चरणों का निरंतर कैंकर्य 'श्रीव्रत' ही गोदा का व्रत है। साक्षात महालक्ष्मी की अवतार माता गोदा-आंडाल द्वारा रचित 30 गीतों के पावन ग्रंथ तिरुप्पावै के प्रथम पांच गीतों में मनोरम प्रकृति का परिचय दिया गया है, 6 से 15 तक गोपिकाओं को नींद से जगाना, 16वें गीत में नंदराजा, यशोदा एवं बलराम जी को जगाना, 18वें और 19वें गीत में श्रीकृष्ण की प्रिय पत्नी नीलादेवी को जगाना, बीसवें और 21वें गीत में भगवान श्रीकृष्ण को जगाना, तदनंतर 27वें गीत तक इस व्रत को करने के कारण और मनोवांछित कामनाओं को प्रकट करना, 28वें गीत में व्रत में हुई त्रुटियों और अपराधों के लिए क्षमा प्रार्थना तथा अंतिम दो गीतों में भगवान के दर्शन-सुख से प्राप्त अनुपम फलों का वर्णन मिलता है।

राजा महाराजाओं को सुंदर आभूषणों से अलंकृत स्त्रियाँ ही जगाती थीं उसी प्रकार रसिक शिरोमणि भगवान श्रीकृष्ण को तिरुप्पावै में अलंकृत गोपिया जगाती हैं। गोदा की मधुर भक्ति से संतुष्ट होकर श्रीरंगनाथ ने विष्णुचित्त

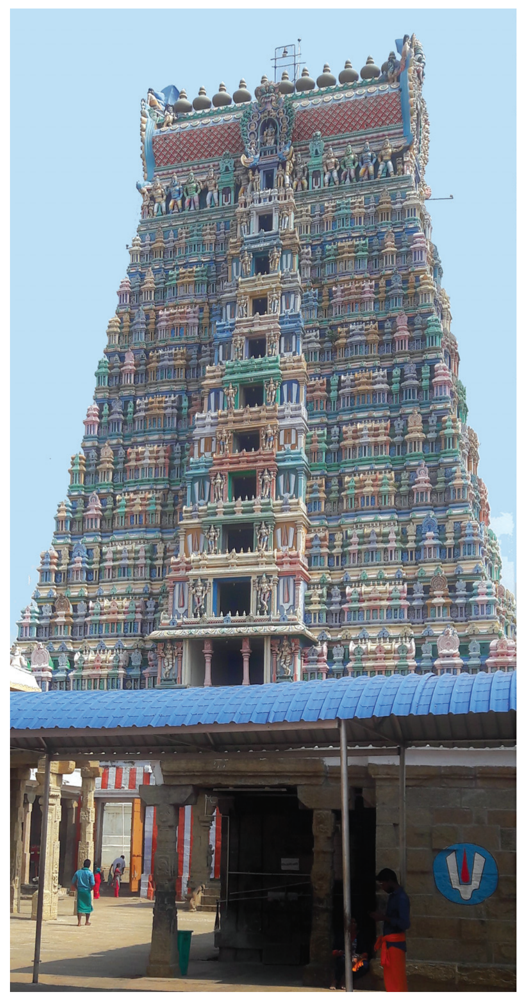

के स्वप्न में आकर विवाह की सम्मति प्रकट कर दी और उसे ससम्मान श्रीरंगम लाने का आदेश दिया, उधर श्रीरंगम के अर्चक स्वामियों को भी स्वप्न में भगवान ने आदेश दिया की छत्र-चामर, रजत छड़ियों के साथ गोदा को राजकीय सम्मान के साथ श्रीरंगम लाया जाए। गोदा को शोभा यात्रा के साथ पालकी में श्रीरंगम लाया गया। गोदा ने श्रीरंगनाथ के विलंब होने पर भगवान के वाहन गरुड़ जी से प्रार्थना की कि वे भगवान को मुहूर्त के समय पर ले आएँ, इस पर गरुड़जी श्रीरंगनाथ को अपनी पीठ पर बैठाकर मुहूर्त के पहले ही श्रीविल्लिपुत्तूर ले आते हैं जहाँ श्रीरंगनाथ एवं गोदाजी का विवाह उत्सव 'न भूतो न भविष्यति' की रीति से संपन्न होता है।

तिरुप्पावै एक महान पावन ग्रंथ है जिसे साक्षात श्री स्वरूपा गोदा-आंडाल द्वारा मानव मात्र के कल्याण के लिए रचित किया गया उनका उद्देश्य समस्त मानवों का उद्धार था। 'तिरु' का अर्थ है श्री यानी सर्व ऐश्वर्य, 'प्पावै' का अर्थ है व्रत! यह कल्याणकारी ग्रंथ 30 पाशुरों यानी गेय पद्यों से बना है।

सामान्यतः सनातन ग्रंथ संस्कृत में ही रचित किए जाते हैं परंतु यह ग्रंथ द्रविड़ भाषा में रचित है जो कि स्थानीय लोगों को बड़ी ही सुलभता से समझ में आती है।

मत्स्य अवतार से कल्कि अवतार तक महाविष्णु के 10 अवतार विभवावतार हैं इनमें नित्यनपायनी महालक्ष्मी सदा श्री महाविष्णु के साथ रहती हैं। इस गोदा-आंडाल अवतार में महालक्ष्मी अपने स्वामी श्री महाविष्णु को छोड़कर अपने संतानों के कल्याण के लिए अकेले ही अवतरित होती हैं क्योंकि माता को अपने पति से अधिक अपनी संतानों से प्रेम होता है। वे हम भटके हुए संतानों को सही मार्ग दिखाने के लिए इस भूमि पर अवतरति हुईं, वे हमें परमपिता श्री महाविष्णु से मिलाने आईं थीं। सभी उपनिषदों का सार तिरुप्पावै ग्रंथ, ईश्वर प्राप्ति का विधान है। सर्वाधिक प्रचलित द्रविड़ भाषा में श्रीविल्लिपुत्तूर में तिरुप्पावै की रचना हुई। गोदा ने तिरुप्पावै ग्रंथ श्री वेंकटेश्वर स्वामी को समर्पित किया और विवाह किया श्रीरंगम के श्री रंगनाथ स्वामी से, इस प्रकार उन्होंने भगवान के अवतारों की अभिन्नता को प्रदर्शित किया। ईश्वर प्राप्ति की कामना ही सबसे बड़ा सौभाग्य है ऐसी इच्छा पैदा होना ही कल्याणकारी है। इसके लिए भक्ति करनी पड़ती है, भक्ति में मन में प्रेम होता है समीपता आवश्यक नहीं है जबकि स्नेह में समीपता आवश्यक होती है। जिस प्रकार लक्ष्मण जी का स्नेह था वे भगवान राम के समीप ही रहना चाहते थे इसी प्रकार दशरथ भी उनकी समीपता चाहते थे और जब राम बिछड़े तो उन्होंने प्राण त्याग दिए लेकिन भरत श्रीराम के परम भक्त ते, 14 वर्ष भगवान राम से अलग रहने के बावजूद भी उनकी भक्ति किंचित मात्र कम नहीं हुई, यह प्रेम की पराकाष्ठा है।

'श्रीव्रत' का संकल्प है कि भगवान हमारे माता-पिता हैं, हम उनके शरणागत हो जाएँ उनके परतंत्र हो जाए। सर्वप्रथम हमें क्षीरसागर में शयन करने वाले भगवान श्री महाविष्णु का चरण वंदन करना चाहिए। श्रीवैष्णव धर्म हमें सोहम से दासोहम तक ले जाता है जैसा कि गीता में श्रीकृष्ण ने शास्त्रों को ही प्रमाण कहा है, हमें शास्त्रों के अनुसार ही भक्ति करनी चाहिए। गोदा जी ने बताया है कि कभी कठोर वचन ना कहें, सदा मधुर वाणी का प्रयोग करें ईश्वर की प्राप्ति करना ही हमारा उद्देश्य है, तिरुप्पावै में गोदादेवी ने वामन अवतार का स्मरण किया है जो पहले बौने रूप में आए, बाद में अपना त्रिविक्रम रूप दिखाया, उन्होंने वरुण देव को आचार्य रूप में माना। मार्गशीर्ष महीने में स्नान व्रत को परम कल्याणकारी बताया। इस प्रकार माता गोदादेवी-आंडाल अम्मा का अवतार हम सब मानवों के कल्याण के लिए हुआ तिरुप्पावै की रचना से उन्होंने हमें ईश्वर प्राप्ति का विधान समझाया।

जय हो माता गोदा-आंडाल की!

(गतांक से)

तिरुपति श्रीवेङ्कटेश्वर

(तिरुपति बालाजी)

हिन्दी अनुवाद - प्रो.यड्लपूडि वेङ्कटरमण राव
प्रो.गोपाल शर्मा

पेयाल्वार

प्रथम (मुदल) आल्वारों में पेयाल्वार तृतीय हैं। मान्यता है कि उनका जन्म मद्रास (चेन्नै) के मैलापूर इलाके में हुआ है। आपने 100 पाशुरों की रचना की है। ये 'दिव्यप्रबन्धम्' के तीसरे 'तिरुवंदादि' में हैं। अपने अनेक पाशुरों में तिरुवेंगडम् की प्रशंसा करते हैं। 14वें पाशुरम में वे कहते हैं कि भगवान के पद कमलों पर नत होने के कारण देवताओं के मुकुट भगवान के पैरों को छूते हैं। चारों वेदों से प्रशंसित भगवान पर मन को केंद्रित कर वेंगडम्वासी पर लगाने पर आध्यात्मिक भावनाओं का विकास होता है। पाशुरम 93 द्वारा वे प्रकट करते हैं कि भगवान सर्वव्यापी हैं। समस्त विश्व में व्याप्त रहते हैं। उनकी व्याप्ति दसों दिशाओं में फैली है। वे वेदों के प्रतिरूप हैं। वेदों का सार है कि 'परमपदम्' (स्वर्ग) की प्राप्ति। वे वेंगडम् पर वास करते हैं। प्रकाशमान सरिताओं और सुरम्य नादों से भक्तों और गिरिवासियों के मन भरे रहते हैं जिनसे उन्हें स्वर्गिक अनुभूति मिलती है। पाशुरम 40 में वे मन को संबोधित करते हैं। उनका कहना है कि ''हे मेरा स्वस्थ मन! तुझे मालूम है कि सर्वोच्च शक्ति रहती है। वह सार्वकालिक शक्ति है। तुझे यह भी मालूम है कि वह शक्ति भक्तों के हृदयों में हमेशा रहती है। तू यह भी जानता है कि वह शक्ति तिरुवेंगडम् पर्वत शिखरों में रहकर शासित करती है। उस शक्ति ने ही इस पृथ्वी को अपने पैरों से नापा है (यह वामन अवतार से संबन्धित है)। पाशुरम 63 घोषित करता है कि ''हे भगवान! हे तिरुमलवासी! आप जटाधारी हैं, आपके हाथों में परशु और चक्र हैं। कटि में सर्प और सुवर्ण मेखला हैं। इस प्रकार आप हर और हरि (शिव और विष्णु) की द्वंद्व मूर्ति हैं। आश्चर्य उत्पन्न करनेवाली विशिष्ट मूर्ति हैं।''

[[इनके पाशुरों में ही सर्वप्रथम रूप से 'तिरुमल' शब्द पाते हैं। इस का संस्कृत रूप श्रीगिरि है। अपने पाशुरम में पोयगै आल्वार के समान पेयाल्वार भी कहते हैं कि 'यह आश्चर्य की बात है कि भगवान वेंकटेश्वर शिव और विष्णु से संबन्धित संकेतों से युक्त हैं। ये हर - हरि स्वरूप हैं। दोनों का मिला - जुला द्वंद्व रूप उनमें मिलता है। पाशुरम 69 में पेयाल्वार की प्रगाढ़ भक्ति और श्रद्धा मिलती है। वे कहते हैं कि स्वयं अपने को अनुभव करते हुए तुलसीमाला धारण कर वेंगडम् का मनन करते हैं। हर दिन क्षीरसागर में पवित्र स्नान करना चाहते हैं। क्योंकि चाणूर आदि पहलवानों को

मारनेवाले श्रीकृष्ण उसी पर शयन करते हैं। पाशुरम 73 घोषित करता है कि उज़्वल दिव्य चरणों की स्मृति, विशेषतः जिन चरणों ने भगवान सूर्य रथ के गमन को निर्देशित किया है, गोपिकाओं के साथ नाचा है, वे ही उनका (आल्वार का) चरम लक्ष्य है। ऐसे भगवान ही वेंगडम् पहाड पर वास करते हैं। पृथ्वी का उद्धार करनेवाले वराहस्वामी का क्षेत्र भी यही है। यही एक मात्र पाशुरम है जिसमें वेंकटाचल पर वराहस्वामी और श्री स्वामिपुष्करिणी का उल्लेख मिलता है।]]

पेयाल्वार ने अपनी देवेरियों सहित वेंकटेश्वर के दक्षिण के प्रमुख मंदिरों वैष्णव में विलसने के बारे में भी कहा है। उनमें वेंका, वेलुक्कैपडि (दोनों कांची के पास),

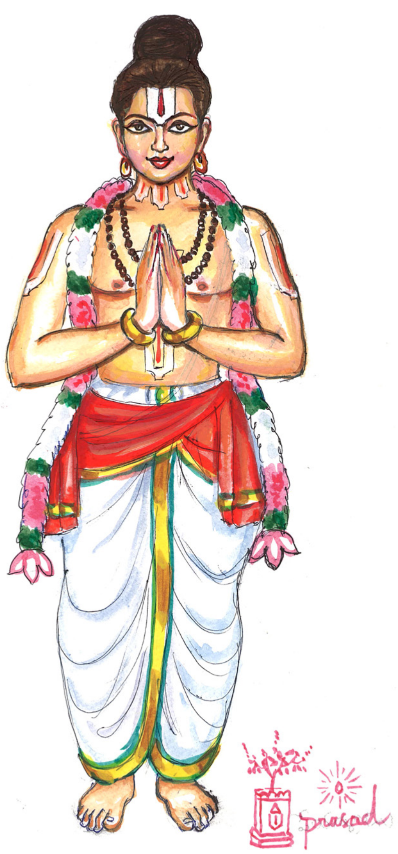

तिरुप्पाडगम्, तिरुविन्नगर, तिरुक्कुडनडै (कुंभकोणम्), श्रीरंगम्, तिरुक्कोत्तियूर आदि हैं। इन सब देवताओं को उन्होंने 'इळन् कुमरन्' (नित्य-युवा) कहा है। इनको गोपाल कृष्ण भी कहते हैं। गोपियों के साथ नृत्य-गान करनेवाले कृष्ण और त्रिविक्रम वामन मानते हैं। ये ही वेदों, शास्त्रों, योगियों, ऋषियों के मनों में भी रहते हैं। अपने मन में भी हैं। उनको वे छोड नहीं सकते। उनसे बिछुड नहीं सकते।

ये वेंगडम् को बाँसों की झाडियों से युक्त पहाड कहते हैं। यहाँ सुन्दर कुरुवा (एक जाति) युवतियाँ रहती हैं। ये अपने आमोद-प्रमोद के समयों में उछलती-कूदती हैं। उस समय उनके बाल उडकर मुँह की कांति को बढाते हैं। इससे चंद्रमा राहु के ग्रसने के डर से मुक्त होते हैं। वे कहते हैं कि वेंगडम् इतना ऊँचा पहाड है कि उसकी चोटियाँ आकाश को छूती हैं। इस पर हाथी, बंदर, बडे-बडे जंगली सुअर, आदि रहते हैं। याळी/सिंहों से भी बली शरभा पशु रहते हैं। इनसे हाथी और सिंह भी डरते हैं। पर्वत अनेक सरिताओं, झरियों से मण्डित है। हाथी तो अपनी सूडों से लक्ष्मी पर मोतियों को गिराते रहते हैं। मादा बंदर तो नर बंदरों से कहती हैं कि उनके लिए चंद्रमा को धरती पर ला देना है।

पाशुरम 70 में पेयाल्वार भी भूतत्ताल्वार के समान वेंगडम् पर वास करनेवाले बंदरों की पवित्रता का वर्णन करते हैं। पाशुरम् 72 में हाथियों द्वारा मद जल से भगवान के अभिषेक की बात करते हैं। सूंडों से फूलों द्वारा भगवान की पूजा करने की बात भी करते हैं। वे भगवान के सामने प्रणमित भी होते हैं।

[[यहाँ गजेन्द्र - मोक्षम् गाथा का प्रभाव दिखाई देता है। मगर से ग्रसित हाथी (गजेन्द्र) की रक्षा विष्णु भगवान ने की है। लगता है वेंगडम् की हाथियों ने भक्ति को परंपरानुगत रूप से प्राप्त किया है।

इसी प्रकार भूतत्ताल्वार कहते हैं कि वेंगडम् के बंदरों ने भगवान के प्रति भक्ति को हनुमान (वानर या बंदरों का मुखिया) से प्राप्त किया है। हनुमान की राम भक्ति अतुलनीय है।]]

डॉ.यस.के.अय्यंगार भी कहते हैं कि पेयाल्वार भी अपने पाशुरों में भगवान के अवतारों की विशेषताएँ रेखांकित करते हैं (हिस्टरी ऑफ तिरुपति, पृ.77)। वे कहते हैं कि ''ये नृसिंह अवतार में सिंह रूप धारण कर हिरण्यकश्यप का संहार करते हैं और शेष के रूप में अनदिखे कानों से वेद घोष सुनते हैं। क्षीरसागर पर भी रहते हैं। गंगा को सिर पर धारण करनेवाले शिव भी भगवान के शरीर के अंग हैं।''

तिरुमलिशैयाल्वार

तिरुमलिशैयाल्वार का नाम तिरुमलिशै नामक गाँव के आधार पर रखा गया है। यह गाँव मद्रास (चेन्नै) के पूनमल्लि इलाके में है। इसी गाँव में आल्वार का जन्म हुआ है। इन्हें भक्तिसार भी कहते हैं। आपने 'नानमुगन-तिरुवंदादि' नामित 100 पाशुरों की रचना की है और इसी प्रकार 'तिरुच्चंद विरुत्तम्' नामित 120 पाशुरों की रचना भी की है। कुल मिलाकार ये सब 'नालायिर दिव्य प्रबन्धम्' में संगृहीत हैं।

पाशुरम 34 (नानमुगन - तिरुवंदादि का) में आपने तिरुक्कोत्तियूर और तिरुवेंगडम् के भगवानों की महत्ताएँ वर्णित करने की ओर अधिक दृष्टि रखी हैं। वे कहते हैं कि ''क्या मैंने कभी उस भगवान को विस्मृत किया है, जिन्होंने मेरी सभी शारीरिक और मानसिक व्यथाओं को दूर किया है?'' पाशुरम 39 में वे कहते हैं कि ''मैं वेंगडत्तान को हमेशा स्मरण करता हूँ ताकि मैं उनकी पूजा-आराधना कर सकूँ। मैं उनसे पहाड की यात्रा की अभिलाषा निवेदित करता हूँ। यह ऐसा पहाड है जहाँ पर भारी वर्षा के कारण लुढकते पत्थरों और वज्रों से हाथी डरते हैं। वज्र यहाँ के अजगरों के मुँहों से गिरते हैं। इस जादू को मैं एक रेत के टीले पर खडे होकर देखता हूँ और उसकी तीव्रता को आश्चर्य चकित हो परखता हूँ।'' पाशुरम 40 में स्पष्ट करते हैं कि ''जब जब मैं 'पर्वत' शब्द सुनता हूँ या उसके बारे में सोचता हूँ तब तब मैं वेंगडम् पर गाता हूँ। इससे मुझे शान्ति मिलती है। मैं स्थिर होकर प्रार्थना करता हूँ। मैं श्रीपति के चरणारविन्दों में अर्पित हो जाता हूँ। भक्तों द्वारा और ऋषियों द्वारा कथित और वेदविदित भगवान के सामने नत हो जाता हूँ।'' पाशुरम 41 में उन्होंने घोषित किया है कि ''हे वेंगडम् के भगवान! जब से आपके स्थायी निवास को छोडकर (दर्शन के बाद) लौटा हूँ, श्रवणा नक्षत्र के संदर्भ में (भगवान का जन्म नक्षत्र) हुई प्रार्थनाओं की प्रतिध्वनियाँ मेरे हृदय में रह गयी हैं। मैं पुनः-पुनः आप की आराधना के लिए पवित्र पर्वत पर आना चाहता हूँ। इसकी उत्कट अभिलाषा मेरे हृदय में जग रही है।'' पाशुरम 42 में भगवान की आराधाना की इच्छा से पर्वत पर जानेवाले भक्तों की प्रशंसा है। प्रकृतितः वेंगडम् में भक्तों के पापों को दूर करने की क्षमता अतुलनीय है। भगवान के पदकमलों की आराधना चतुर्मुख ब्रह्म और त्रिनेत्र शिव भी श्रद्धा से करते हैं। पाशुरम 43 कहता है कि चंद्रशेखर शिव और पद्मासनी ब्रह्म भी भगवान की आराधना में कर्पूर नीराजन अर्पित करने के लिए वेंगडम् पर प्रातः वेला और सायं संध्याओं में पधारते हैं। पाशुरम 44 में आल्वार भक्तों को सूचित करते हैं कि वे अपनी युवावस्था में ही वेंगडम् जाकर भगवान की आराधना करें। भगवान वहाँ पर नित्य युवा के रूप में ही रहते हैं। एक समय रावण ने भी उन्हें एक बच्चे के रूप में अपनी गोद में लिया है। उस समय भगवान ने अपने छोटे-छोटे चरणों से रावण के दस सिरों की गिनती की और गायब हो गये। पाशुरम 45 में आल्वार ने वेंगडम् की ठंडी ठंडी सरिताओं की प्रशंसा की है। यहाँ पर भगवान रहते हैं और अनेक पवित्र स्थलों में विलसित होकर भक्तों द्वारा फूलों से पूजे जाते हैं। देवता समूह और यहाँ तक वन्य जंतु समुदाय भी उनकी सेवा में पुनीत होते हैं। पाशुरम 46 में आल्वार स्पष्ट करते हैं कि वेंगडम् पर एक हाथी ने एक समय अपने ज्ञान से चंद्रमा को एक दीप समझकर उसे आसमान

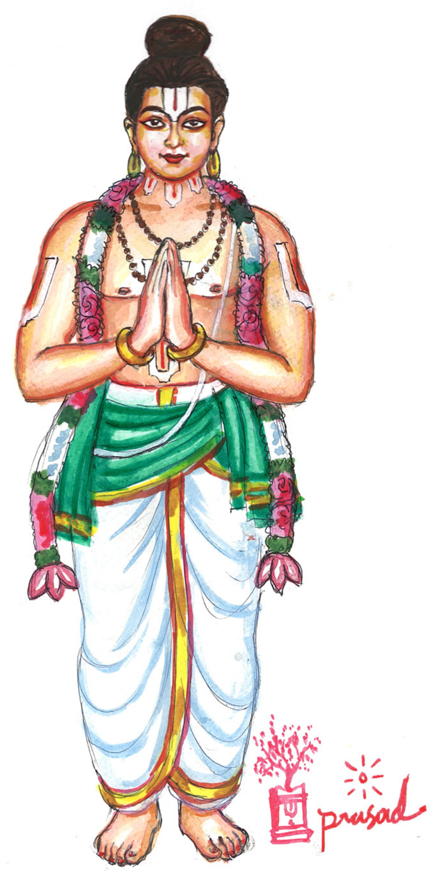

से लाकर भगवान को अर्पित करना चाहा। अपनी सूँड को इस प्रयत्न में ऊपर उठाया। तब कुछ आखेटकों ने उसे घेरा तथा हिलने नहीं दिया। पर्वतवासी 'कुरवा' लोगों ने उन पर बाणों की वर्षा की और उनको वहाँ से हटाया। आगे कहते हैं कि वेंगडम् की यात्रा विश्व-प्रदक्षिणा से कई-गुना अधिक महत्वपूर्ण है। पाशुरम 47 कहता है कि वेंगडम् आलिस (याळी शरभों), सिंहों, वानरों और 'कुरवा' जाति के लोगों से भरा है। इस पर्वत के वनों में सुवर्ण, मणियाँ, मोती आदि झंझाओं से उडते रहते हैं। यही नील मणि श्याम भगवान का अधिवास है। पाशुरम 48 वेंगडम् को देवताओं की तीर्थस्थली कहा गया है। यह मानवों के पापों का हरण करनेवाला पवित्र स्थल है। रोगों को नाश करनेवाला प्रान्त है। दानवों (राक्षस, असुर) को अपने चक्र से संहार करनेवाले भगवान का वास स्थान है। देवताओं (विण्णर) के रक्षक का निवास स्थल है। पाशुरम 90 यह विश्वास दिलाता है कि जो धार्मिक भावना और भक्ति से ओतप्रोत होकर भी स्वर्ग पर अधिकार जमाना चाहते है, वे वेंगडत्तान के पदकमलों की सेवा करते हैं, आराधना करते है तो अवश्य स्वर्गीय आनन्द और शान्ति पाते हैं। वे अवश्य सर्वेश्वर के भक्त होकर उनकी महत्ता को समझकर उनके सेवक बन जाते हैं।

पाशुरम 60 में आल्वार का कहना है कि तिरुवेंगडम् के भगवान और तिरुक्कुंडनडै के भगवान दोनों एक ही हैं। पाशुरम 80 में वे मानवों को तिरुवेंगडम् के भगवान के पवित्र चरणों में आश्रय पाने की भावना से बढने के लिए प्रेरित करते हैं। योग मुद्रा में क्षीरसागर शयनी भगवान, कालनेमी राक्षस के संहारक, सुग्रीव के रक्षक इसी वेंगडम् पर रहनेवाले भगवान ही हैं। राम और विष्णु एक ही हैं। वेंकटेश्वर ही सब हैं। तिरुमलिशैयाल्वार के संबन्ध में अपनी पुस्तक ''हिस्टरी ऑफ तिरुपति'' में डॉ.यस.के.अय्यंगार कहते हैं कि ''अन्य तीनों आल्वारों, जिनके बारे में पहले कहा गया है, के समान ये भी विष्णु भगवान को ही एक मात्र रक्षक मानते हैं। ये मात्र माननेवाले ही नहीं बल्कि उनसे बढकर अधिक कट्टर भी हैं। प्रथम तीन आल्वार तो कुछ सहनशील हैं। इतरों से अन्य देवताओं की आराधना को सहन करते हैं। ब्रह्म, इन्द्र, शिव आदि की आराधना को (अन्यों द्वारा) मान सकते हैं। लेकिन यह इस आल्वार के लिए सहनीय नहीं है। पाशुरम 66 यह स्पष्ट रेखांकित करता है। इसमें वे कहते हैं - ''मेरा हृदय भगवान का अब शाश्वत निवास स्थान है। इससे पहले आदिशेष उनके शयन स्थान थे। मैं घोषित करता हूँ कि उनके स्थान पर चंद्रशेखर शिव को अथवा ब्रह्म को मैं रख नहीं सकता। न ही मैं उनकी प्रदक्षिणा कर पूजा-अर्चना कर सकता हूँ।'' ''यह स्पष्ट और शंका रहित वक्तव्य है। इससे स्पष्ट है कि विष्णु के अलावा किसी अन्य देवता के लिए उनके हृदय या मन में स्थान नहीं है।''

''तिरुच्चन्द्र - विरुत्तम'' के पाशुरम 90 को उद्धृत करते हुए डॉ.यस.के.अय्यंगार आल्वार का जन्म और उनके द्वारा संप्राप्त आध्यात्मिक उन्नतियों को प्रस्तावित करते हैं। उस पाशुरम में आल्वार कहते हैं कि ''मेरा जन्म किसी कुल और जाति में नहीं हुआ है। वेदों द्वारा प्रतिपादित किसी विषय की मैंने शिक्षा नहीं प्राप्त की। मैंने पंचेद्रियों पर अनुशासन करने की शक्ति नहीं पायी। मैं वासनाओं की ओर अब भी आकर्षित होता हूँ। इन सबका मुकाबला नहीं कर पा रहा हूँ। मैंने आप के पवित्र चरणों की ओर बढने में भी कोई योग्यता नहीं पायी है।'' (पृ.128)। इसके बाद अय्यंगार कहते हैं कि ''इतना कहने पर भी मानना ही होगा कि यह आल्वार का आत्मनिवेदन मात्र है। वे यही कहना चाहते हैं कि भगवान की भक्ति में सच्चाई और संपूर्ण विश्वास आवश्यक है। भगवान के सामने आत्म समर्पण और प्रपत्ति की भावना ही भक्ति और मुक्ति की एक मात्र साधना है। भगवान की कृपा पर निर्भर रहना ही भक्त के लिए सरल मार्ग है। भगवान के प्रति अविकल भक्ति ही सही मार्ग है।'' यही आल्वार का पवित्र भक्ति मार्ग है।

क्रमशः

तिरुचानूर
श्री पद्मावती देवी जी का ब्रह्मोत्सव

2024 नवम्बर 27 से दिसंबर 06 तक

दिनांक	वार	दिन	रात
27-11-2024	बुधवार	लक्षकुंकुमार्चन	सेनाधिपति उत्सव, अंकुरार्पण
28-11-2024	गुरुवार	तिरुच्चि उत्सव, ध्वजारोहण	लघुशेषवाहन
29-11-2024	शुक्रवार	महाशेषवाहन	हंसवाहन
30-11-2024	शनिवार	मोतीवितानवाहन	सिंहवाहन
01-12-2024	रविवार	कल्पवृक्षवाहन	हनुमंतवाहन
02-12-2024	सोमवार	पालकी उत्सव - सा.वसंतोत्सव	गजवाहन
03-12-2024	मंगलवार	सर्वभूपालवाहन, स्वर्णरथ	गरुडवाहन
04-12-2024	बुधवार	सूर्यप्रभावाहन	चंद्रप्रभावाहन
05-12-2024	गुरुवार	रथ-यात्रा	अश्ववाहन
06-12-2024	शुक्रवार	पालकी तिरुच्चि उत्सव, तीर्थवारी, अवभृथोत्सव, चक्रस्नान, पंचमीतीर्थ।	तिरुच्चि उत्सव, ध्वजावरोहण।

श्री पद्मावती देवी जी का पुष्पयाग महोत्सव

दिनांक	वार	कार्यक्रम	
07-12-2024	शनिवार	पुष्पयाग	पंचमीतीर्थ के अगले दिन आयोजित करते है।

ति.ति.दे. के नूतन न्यास-मंडली

आं.प्र. राज्य सरकार के द्वारा 2024, नवंबर महीने में ति.ति.देवस्थान के नूतन न्यास-मंडली के अध्यक्ष और सदस्य के पद को शपथ लिया। उनका विवरण... ...

श्री बोल्लिनेनी राजगोपल नायडू,
ति.ति.दे. न्यास-मंडली के अध्यक्ष

श्री जे.नेहरु
एम.एल.ए.,
सदस्य

श्रीमती वी.प्रशांति रेड्डी
एम.एल.ए.,
सदस्य

श्री एम.एस.राजु
एम.एल.ए.,
सदस्य

डॉ.पनबाका लक्ष्मी
सदस्य

श्री एन.नर्सीरेड्डी
सदस्य

श्री जे.पी.सांबशिवराव
सदस्य

श्री एन.सदाशिवराव
सदस्य

श्री वी.कृष्णमूर्ति
सदस्य

श्री ए.एम.कोटेश्वर राव
सदस्य

श्री एम.राजशेखर गौड
सदस्य

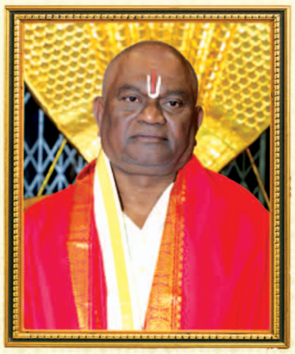

श्री जे.कृष्णमूर्ति
सदस्य

श्री आर.एन.दर्शन
सदस्य

ति.ति.दे. के नूतन न्यास-मंडली

श्री एम.शांताराम
सदस्य

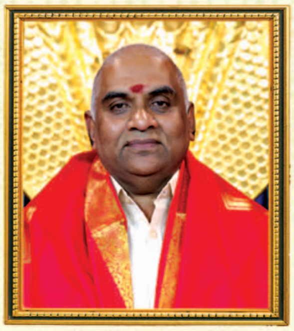

श्री पी.राममूर्ति
सदस्य

श्रीमती टी.जानकी देवी
सदस्य

श्री बी.महेंदर रेड्डी
सदस्य

श्रीमती ए.रंगश्री
सदस्य

श्री बी.आनंदसायी
सदस्य

श्रीमती सुचित्रा एल्ला
सदस्य

श्री एस.नरेश कुमार
सदस्य

डॉ.अदित देसाई
सदस्य

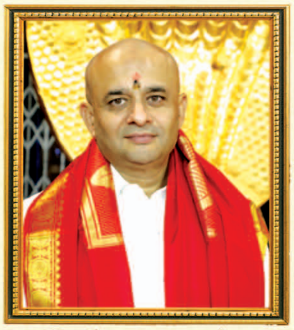

श्री सौरभ एच. बोरा
सदस्य

श्री जी.भानुप्रकाश रेड्डी
सदस्य

श्री एस.सत्यनारायण, आई.ए.एस.,
आं.प्र. धर्मस्व शाखा के सचिव (एफ.ए.सी.,)
और आयुक्त
ति.ति.दे. न्यास-मंडली के पदेन सदस्य

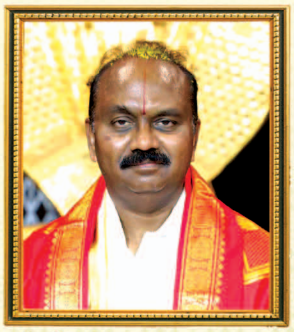

श्री जे.श्यामला राव, आई.ए.एस.,
ति.ति.दे. कार्यनिर्वहणाधिकारी,
ति.ति.दे. न्यास-मंडली के पदेन सदस्य

दि. 06-11-2024 को तिरुमल मंदिर में
ति.ति.दे. नूतन न्यास-मंडली के अध्यक्ष के पद का कार्यभार को
स्वीकार की गयी श्री बी.आर.नायडू जी।
तदनंतर ध्वजस्तंभ को स्पर्श करके प्रणाम करते हुए दृश्य।

दि. 06-11-2024 को तिरुमल, रंगनायक मंडप में ति.ति.दे.
नूतन न्यास-मंडली के अध्यक्ष के पद का शपथ ग्रहण के बाद,
धर्मपत्नी सहित अध्यक्ष जी ने भगवान जी का प्रसाद को ति.ति.दे. के ई.ओ.
श्री जे.श्यामला राव, आई.ए.एस., और अतिरिक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी
श्री सी.एच.वेंकय्या चौदरी, आई.आर.एस., से स्वीकारते हुए दृश्य।

दि. 07-11-2024 को तिरुमल में स्थित काकुलमानुदिब्बा
डंपिंग यार्ड को ति.ति.दे. के कर्मचारी से जाँच करते हुए
ति.ति.दे. न्यास-मंडली के अध्यक्ष श्री बी.आर.नायडू जी।

दि. 08-11-2024 को तिरुमल, धर्मगिरि वेद विज्ञान पीठ को
ति.ति.दे. न्यास-मंडली के अध्यक्ष श्री बी.आर.नायडू जी ने
संदर्शन किया। इस संदर्भ में अध्यक्ष जी को
स्वागत करते हुए प्रधानाचार्य जी।

दि. 08-11-2024 को तिरुमल में पेद्द(बडा) जीयर
मठ को संदर्शन की गयी ति.ति.दे. न्यास-मंडली के अध्यक्ष
श्री बी.आर.नायडू जी को मंगलाशासन पूर्वक आशीर्वाद
देते हुए श्रीश्रीश्री पेद्द(बडा) जीयर स्वामीजी।

दि. 08-11-2024 को तिरुमल में स्थित एस.वी.गोशाला को
ति.ति.दे. न्यास-मंडली के अध्यक्ष श्री बी.आर.नायडू जी ने
संदर्शन करके गोमाता को चारा देते हुए दृश्य। इस कार्यक्रम में
एस.वी.गोशाला के निदेशक डॉ.हरनाथ रेड्डी ने भाग लिया।

स्कन्द षष्ठी का महत्व

- श्रीमती टी.लता मंगेश

स्कन्दपुराण में कुमार कार्तिकेय ही हैं तथा यह पुराण सभी पुराणों में सबसे बडा माना जाता है। शास्त्रों में इस बात का उल्लेख मिलता है कि स्कन्द षष्ठी का व्रत करने से काम, क्रोध, मद, मोह, अहंकार से मुक्ति मिलती है और सन्मार्ग की प्राप्ति होती है। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार भगवान कार्तिकेय षष्ठी तिथि और मंगल ग्रह के स्वामी हैं तथा दक्षिण दिशा में उनका निवास स्थान है। इसीलिए जिन जातकों की कुंडली में कर्क राशि अर्थात नीच का मंगल होता है, उन्हें मंगल को मजबूत करने तथा मंगल के शुभ फल पाने के लिए इस दिन भगवान कार्तिकेय का व्रत करना चाहिए। क्योंकि स्कंद षष्ठी भगवान कार्तिकेय को प्रिय होने से इस दिन व्रत अवश्य करना चाहिए। भगवान कार्तिकेय को चम्पा के फूल पसंद होने के कारण ही इस दिन को 'स्कन्द षष्ठी' के अलावा 'चम्पा षष्ठी' के नाम से भी जाना जाता है।

शिव और पार्वती के पुत्र कार्तिकेय को स्कंद कहा गया है। कुछ लोग आषाढ माह की शुक्ल पक्ष की षष्ठी तिथि को स्कंद षष्ठी मानते हैं और तिथितत्त्व' में चैत्र शुक्ल पक्ष की षष्ठी को 'स्कंद षष्ठी' कहा है, लेकिन कार्तिक कृष्ण पक्ष की षष्ठी को भी 'स्कंद षष्ठी व्रत' के नाम से जाना जाता है। यह व्रत 'संतान षष्ठी' नाम से भी जाना जाता है। स्कंदपुराण के नारद-नारायण संवाद में इस व्रत की महिमा का वर्णन मिलता है। इस व्रत को रखने से संतान की सभी तरह की पीडा का शमन हो जाता है। एक दिन पूर्व व्रत रख कर षष्ठी को कार्तिकेय की पूजा की जाती है।

दक्षिण भारत में इस व्रत का ज्यादा प्रचलन है। खासकर तमिलनाडु में यह व्रत प्रत्येक मास की कृष्ण पक्ष की षष्ठी तिथि को किया जाता है। वर्ष के किसी भी मास के शुक्ल पक्ष की षष्ठी को यह व्रत आरंभ किया जा सकता है। खासकर चैत्र, आश्विन और कार्तिक मास की षष्ठी को इस व्रत को आरंभ करने का प्रचलन अधिक है। स्कंद षष्ठी के

अवसर पर शिव-पार्वती की पूजा के साथ ही स्कंद की पूजा की जाती है। मंदिरों में विशेष पूजा-अर्चना की जाती है। **दक्षिण भारत में कार्तिकेय को कुमार, स्कंद और मुरुगन के नाम से भी जाना जाता है।**

स्कंद षष्ठी की कथा के अनुसार स्कंद षष्ठी के व्रत से च्यवन ऋषि को आंखों की ज्योति प्राप्त हुई थी। स्कंद षष्ठी की कृपा से प्रियव्रत का मृत शिशु जीवित हो गया था। इस तरह इसके व्रत के महत्व के कई उदाहरण पुराणों में मिलते हैं।

स्कंद षष्ठी व्रत का महत्व

स्कंद पुराण के नारद-नारायण संवाद में संतान प्राप्ति और संतान की पीडाओं को दूर करने वाले इस व्रत का विधान बताया गया है। एक दिन पहले से उपवास करके षष्ठी को कुमार यानी कार्तिकेय की पूजा करनी चाहिए। भगवान कार्तिकेय का ये व्रत करने से दुश्मनों पर जीत मिलती है। वहीं हर तरह की परेशानियां भी दूर हो जाती हैं।

पुराणों के अनुसार स्कंद षष्ठी की उपासना से च्यवन ऋषि को आँखों की ज्योति प्राप्त हुई। ब्रह्मवैवर्त पुराण में बताया गया है कि स्कंद षष्ठी की कृपा से ही प्रियव्रत का मृत शिशु जीवित हो जाता है।

स्कंद

स्कंद एक प्राचीन देवता हैं जिनका उल्लेख पत्थर के शिलालेखों में किया गया है और सिक्कों पर भी दिखाया गया है (पहली शताब्दी से 5वीं शताब्दी तक) स्कंद की कहानी 'महभारत', 'शिव पुराण' में पाई जाती है और कालिदास के 'कुमार संभवम' में दोबारा बताई गई है। छांदोग्य उपनिषद स्कंद की पहचान सनत कुमार के रूप में करता है। तमिल में, अरुणगिरि की थिरुप्पुगाज, नक्कीरार की थिरु मुरुगात्रुपादाई और कई अन्य साहित्य भक्ति कविता में मुरुगा की महिमा की प्रशंसा करते हैं। स्कंद षष्ठी की कहानी स्कंद या कुमार के जन्म और उनके दिव्य अवतार के उद्देश्य की पूर्ति की कहानी है। ''असुर तारकासुर से परेशान होकर, इंद्र को अपने साथ लेकर देवता स्वयं जन्मे निर्माता की दुनिया में चले गए'' (कुमार संभव 2.1)

सृष्टिकर्ता भगवान ब्रह्म ने कहा, ''केवल शिव की चिंगारी ही ऐसे नायक को जन्म दे सकती है जो दुष्ट शक्तियों को हरा देगा'' दुर्भाग्य से योगियों के राजा शिव ध्यान और समाधि की गहरी अवस्था में खो गए थे। किसी भी देवता ने उसे परेशान करने की हिम्मत नहीं की... कम से कम उसे संतान पैदा करने के लिए तो मनाया। ब्रह्म के सुझाव पर, उन्होंने पार्वती और काम (प्रेम के देवता) से मदद मांगी। पार्वती मदद करने के लिए

सहमत हो गईं और शिव का ध्यान आकर्षित करने के लिए कठोर तपस्या में लग गईं। कामदेव भी मदद के लिए तैयार हो गए और काम में लग गए शिव को समाधि की अवस्था से जगाने का आत्मघाती मिशन। काम ने शिव पर अपने प्रेम के बाण चलाए, जो अंततः परेशान हो गए और उनकी तीसरी आंख से क्रोध की आग ने काम को भस्म कर दिया। पार्वती की तपस्या और काम का त्याग सफल हुआ। शिव अपनी समाधि से जागृत हुए। हालाँकि, कोई भी उसके उग्र बीज की चिंगारी को सहन नहीं कर सका। यह अग्नि के मुख में गिरा, और बाद में गंगा ने इसे प्राप्त कर लिया, जिसने बदले में इसे सारा वन (घास की तरह तीर का जंगल) में फेंक दिया। इस प्रकार शरवनभव का जन्म हुआ। वह स्कंद भी थे - तपस्या के माध्यम से संरक्षित शिव की शुद्धता की शक्ति। स्कंद का पालन-पोषण कृत्तिका के दिव्य नक्षत्र की छह माताओं द्वारा किया गया था। कार्तिकेय ने छह माताओं द्वारा पाले जाने के लिए स्वयं को छह शिशुओं में विभाजित कर लिया। जब पार्वती आईं और सभी छह शिशुओं को इकट्ठा किया, तो वह षण्मुखा बन गए - छह चेहरे और एक शरीर वाला।

षण्मुखा, कुमार बन गया - शक्तिशाली पौरुष किशोर जो सुंदर और आकर्षक (मुरुगा) भी था। उन्हें भगवान की सेना का अधिपति (देवसेनापति) बनाया गया था। ''... सेनानायकों में मैं स्कंद हूं।'' ... (गीता)। स्कंद को अपनी माता पराशक्ति से एक अत्यंत शक्तिशाली वेल आयुध प्राप्त हुआ था। इसलिए वह 'शक्ति वेलन' भी है। उसने सिंहमुख, सुरपद्मन और तारकासुर की सेनाओं से छह दिनों तक युद्ध किया और छठे दिन उन सभी को परास्त कर दिया। असुरों का विनाश हो गया और देवता मुक्त हो गये। आषाढ (अक्टूबर/नवंबर) महीने में शुक्ल पक्ष के छठे दिन (षष्ठी) को स्कंद षष्ठी के रूप में मनाया जाता हैं।

स्कंद षष्ठी महत्व

स्कंद शक्ति के अधिदेव हैं, देवताओं ने इन्हें अपना सेनापतित्व प्रदान किया मयूरा पर आसीन देवसेनापति कुमार कार्तिक की आराधना दक्षिण भारत में सबसे ज्यादा होती है, यहाँ पर यह 'मुरुगन' नाम से विख्यात हैं। प्रतिष्ठा, विजय, व्यवस्था, अनुशासन सभी कुछ इनकी कृपा से सम्पन्न होते हैं, स्कन्दपुराण के मूल उपदेष्टा कुमार कार्तिकेय ही हैं तथा यह पुराण सभी पुराणों में सबसे विशाल है। स्कंद भगवान हिंदु धर्म के प्रमुख देवों में से एक हैं, स्कंद को कार्तिकेय और मुरुगन नामों से भी पुकारा जाता 'दक्षिण भारत में पूजे जाने वाले प्रमुख देवताओं में से एक भगवान कार्तिकेय शिव-पार्वती के पुत्र हैं', कार्तिकेय भगवान के अधिकतर भक्त तमिल हिन्दू हैं। इनकी पूजा मुख्यतः भारत के दक्षिणी राज्यों और विशेषकर तमिलनाडु में होती है। भगवान स्कंद के सबसे प्रसिद्ध मंदिर तमिलनाडु में ही स्थित हैं।

स्कंद षष्ठी के पीछे की पौराणिक कथा

पौराणिक कथाओं के अनुसार, सुरपद्मन एक राक्षस था, जिसने कई वरदान प्राप्त किए, वह काफी शक्तिशाली हो गया और देवताओं पर भी अत्याचार करने लगा। अपने माता-पिता, भगवान शिव और देवी पार्वती की इच्छा के अनुसार, मुरुगन ने राक्षसी सेनाओं के खिलाफ दिव्य प्राणियों की एक सेना का नेतृत्व किया और सुरपद्मन, उसके गुर्गों और उनकी शक्तिशाली सेना से लडाई की। भयंकर युद्ध छठे दिन समाप्त हुआ, जब भगवान मुरुगन ने सुरपद्मन और उसकी बुरी ताकतों को निर्णायक रूप से हरा दिया, जिससे देवताओं और लोगों को उसके दमन से राहत मिली। इस दिन को स्कंद षष्ठी के रूप में मनाया जाता है। कृतज्ञ भक्त मुरुगन की वीरता को याद करते हैं, पहले पांच दिनों तक उनकी महिमा गाते हैं, और छठे स्कंद षष्ठी के

दिन, वे व्रत या उपवास करते हैं और उनकी शानदार जीत के उपलक्ष्य में उनकी विशेष पूजा करते हैं। इस विजय को कई मुरुगन मंदिरों में सुरसंहारम, सुरपद्मन के विनाश के रूप में भी प्रदर्शित किया जाता है, और भगवान मुरुगा के समुद्र तटीय मंदिर तिरुचेंदूर में बडे उत्साह के साथ आयोजित किया जाता है।

स्कंद षष्ठी व्रत के पालन के लाभ

पवित्र ग्रंथों के अनुसार, स्कंद षष्ठी पर व्रत (उपवास) करने से निम्न लिखित लाभ मिल सकते हैं :

नकारात्मक ऊर्जाओं से दूर रहें, बाधाओं को दूर करने में मदद करें, सभी प्रयासों में सफलता प्राप्त करें, स्कंद षष्ठी कवचम स्तोत्र का जाप उत्तम स्वास्थ्य प्रदान करेगा और धन को आकर्षित करेगा।

मुरुगन मंगल ग्रह के अधिपति भी हैं और उनकी पूजा से जन्म कुंडली में मंगल दोषों को दूर करने में मदद मिल सकती हैं।

जीवन का दृढता से सामना करने और समस्याओं पर विजय पाने का साहस प्रदान करें। जब उन्होंने अपना पुष्पसारम (फूलों का तीर) भगवान शिव की ओर छोडा तो ममता की एकाग्रता भंग हो गई। इससे शासक क्रोधित हो गया और उसने मिनामाटा को जलाकर राख कर दिया। बाद में, सभी देवताओं के आदेश पर, शिव ने मनमाता को पुनर्जीवित किया और अपनी सभी राक्षस-वध क्षमताओं से संपन्न एक बच्चे को जन्म देने का फैसला किया। भगवान शिव ने अपनी तीसरी आंख से छह चिंगारियां निकालीं, जिन्हें अग्नि के देवता सरवन नदी के ठंडे पानी में ले गए, जहां छह चिंगारियां छह पवित्र बच्चों के रूप में प्रकट हुईं। छह युवतियाँ, जिन्हें कार्तिका बहनें कहा जाता है (कार्तिक नक्षत्र के छह सितारों से), इन शिशुओं की देखभाल के लिए सहमत हुईं। जब माता पार्वती आईं और उन्होंने तालाब में पल रहे छह बच्चों को दुलार किया, तो वे छह चेहरे, बारह हाथ और दो पैरों वाले एक बच्चे में मिल गए। इस भव्य आकृति को कार्तिकेय नाम दिया गया था। माता पार्वती ने उन्हें योग्यता, पराक्रम और एक भाला प्रदान किया जिसे तमिल में वेल कहा जाता है।

उम्र बढने के साथ कार्तिकेय एक दार्शनिक और योद्धा के रूप में विकसित हुए। वह ज्ञान और करुणा की प्रतिमूर्ति बन गये और उन्हें युद्ध की व्यापक समझ थी। उसने और उसके सहयोगियों ने सुरपद्मन और उसके भाइयों के खिलाफ युद्ध छेड दिया। भगवान ने राक्षस के शहर की ओर जाते समय सुरपद्मन के भाइयों सिंहमुखन और तारकासुरन की हत्या कर दी। फिर भगवान और शैतान के बीच भयंकर युद्ध हुआ, जिसके दौरान उसने सुरपद्मन के वेल को काट दिया। सुरपद्मन की लाश से एक मोर और एक मुर्गी निकला, पहला सिद्धांत के वाहन के रूप में काम कर रहा था और दूसरा उसके झंडे पर बुराई पर विजय के संकेत के रूप में काम कर रहा था।

कार्तिकेय ने षष्ठी पर सुरपद्मन को हराया। इसके अतिरिक्त, ऐसा माना जाता है कि जब सुरपद्मन को गंभीर घाव लगे, तो उसने भगवान से उसे छोड देने की प्रार्थना की। इसलिए मुरुगा ने उसे इस शर्त पर मोर में बदल दिया कि वह हमेशा के लिए उसका वाहन बना रहेगा।

स्कंद षष्ठी मंत्र :

स्कंद षष्ठी व्रत के दौरान शक्तिशाली स्कंद षष्ठी मंत्र का जाप करें। नीचे दिए गए शक्तिशाली स्कंद षष्ठी मंत्र का प्रतिदिन 108 बार जाप करें :-

ॐ शरवणभवाय नमः

मिथ की महिला चरित

दाक्षायणी

- डॉ.के.एम.भवानी

आवत ही हरषै नहीं नैनन नहीं सनेह।

तुलसी तहाँ न जाइए कंचन बरसे मेह।।

आदिकवि वाल्मीकि का दूसरा अवतार या कलियुग वाल्मीकि माना जाने वाला सुप्रसिद्ध हिंदी के कवि तुलसीदास जी से रचित इस दोहे का अर्थ है कि अगर हम कहीं जाने पर हमें देखने पर मेजबानों की आँखों में खुशी और स्नेह भावना नहीं दिखती है तो ऐसे जगह पर मेघ पानी के बदले सोना बरसने पर भी हमें वहाँ नहीं जाना चाहिए।

हमारे पुराणों और भारतीय संस्कृति के अनुसार शादी के बाद पति-पत्नी दो शरीरों में शामिल एक ही आत्मा है। इसी सत्य को प्रमाणित करते हुए भगवान शिव माता पार्वती को अपना आधा शरीर में समाकर अर्धनारीश्वर बन गया है। यह आदिदंपति कुछ समय के लिए एक दूसरे से दूर होना आश्चर्य की बात है। भगवान की अद्भुत लीला है।

सती देवी या दाक्षायणी भगवान शिव की पत्नी है। दक्षप्रजापति की पुत्री होने के कारण माता सती दाक्षायणी कहलाई गई लेकिन बाद में माता यह नाम से पुकारा जाना बिल्कुल पसंद नहीं की। क्यों? इसके पीछे एक अद्भुत कहानी है।

एक समय में सारे महान ऋषिगण मिलकर एक महायज्ञ का आयोजन करते हैं। उस यज्ञ को देखने के लिए दक्षप्रजापति भी वहाँ आता है। उसे देखते ही सभा में उपस्थित सभी खड़े होकर उसका सादर अभिवादन करते हैं लेकिन महादेव शिव मौन मुद्रा में ही बैठा रहता है। दक्षप्रजापति शिव को भगवान नहीं, दामाद की नजर से ही देखने के कारण, शिव बैठा रहना अपमान समझता है इसलिए शिव पर बहुत क्रोधित होकर उसे निंदा भरी शब्दों से अपमानित करता है लेकिन मान-अपमान के अतीत शंकर मौन ही रहता है।

दक्षप्रजापति उस घटना को भूल नहीं पाता है इसलिए घमंड से शिव रहित यज्ञ करके, शिव पर बदला लेने की कोशिश करता है और यज्ञ का आयोजन करके उसमें शामिल होने के लिए सभी देव गण को निमंत्रण भेजकर केवल शिव और उसकी पत्नी होने के कारण (अपनी पुत्री होने पर भी) दाक्षायणी को नहीं बुलाता है।

कैलाश पर्वत पर स्थित सती देवी एक दिन सभी देव गण को सज-धज कर, धूम-धाम से अपने-अपने वाहनों में जाते हुए देखती है। पता करने पर उसे मालूम होता है कि उसके पिता दक्ष एक महान यज्ञ कर रहा है लेकिन वह हविस (यज्ञ में देवताओं को अर्पण करने वाला भाग) लेने शिव महादेव को नहीं बुलाया। मगर सती देवी मायके को जाने के लिए निमंत्रण की जरूरत महसूस नहीं करती है इसलिए पति परमेश्वर के पास जाकर यज्ञ देखने जाने की बात कहती है। तब भगवान शिव पत्नी को समझाते हुए इस तरह कहता है - ''सती! आप हालत में तुम्हारी बात सही है, लेकिन अब तुम्हारे पिताजी मुझे शत्रु समझ रहा है इसलिए अब तुम वहाँ जाने पर भी मेरी पत्नी होने के कारण वह तुम्हारी इज्ज़त नहीं करता है। अब दक्षप्रजापति तुम्हें अपनी पुत्री के रूप में नहीं, मेरी पत्नी की नजर से ही देखता। इसलिए बिना बुलाए तुम्हें वहाँ

जाना उचित नहीं है।'' लेकिन सती देवी शिव से प्रार्थना करती है कि उसकी सारी बहनें यज्ञ देखने जा रही हैं इसलिए वह भी मायका जाकर उन सभी से मिलना चाहती है। तो शिव मजबूर होकर सती को भेजने के लिए राजी हो जाता है।

सती खुशी से नंदी पर बैठकर अपने प्रमध गणों के साथ यज्ञ वाटिका में पहुँचती है। माता और बहनें उसे प्यार से सम्मान करती हैं लेकिन पिता उससे बात तक नहीं करता है। सबको हविस देते समय दक्षप्रजापति सारे देवगण को देकर भगवान शिव को नहीं देता है। यह सती सहन नहीं कर पाती है। वह बहु क्रोधित होकर पिता से शिव को हविस नहीं देने का कारण पूछती है तो दक्षप्रजापति गर्व से इस प्रकार शिव की निंदा करता है- ''सती! तुम्हें अपने पति के बारे में ज्यादा बोलने की जरूरत नहीं है। तुम यहाँ रहना पसंद करती हो या नहीं, यह तुम्हारी मर्जी है। तुम्हारा पति अमंगलकर है। वह भूत-प्रेत, पिशाचों के अधिपति है। उसे अपना कुल भी नहीं है इसलिए मैंने यज्ञ में भाग लेने उसे नहीं बुलाया।'' सती देवी भरी सभा में अपने पति की निंदा सुन नहीं पाती है। यह अपमान उसे जलाता है। तब वह वापस कैलाश लौट जाना भी नहीं चाहती है। दाक्षायणी बनकर जिंदा रहना वह सहन नहीं कर पाती है। सती असहनीय वेदना से तुरंत दक्ष के कारण मिला शरीर छोड़ना उचित समझती है वहीं पर योगाग्नि प्रज्वलित करके उसमें दग्ध हो जाती है। बाद में माता सती फिर पति शिव महादेव से मिलने हिमवंत की पुत्री बनकर पार्वती नाम से परमेश्वर की पत्नी बन जाती है।

अष्टादश शक्तिपीठ

कहा जाता है कि यज्ञ कुंड में कूदकर आत्मसमर्पण किया दाक्षायणी के बिना शिव नहीं रह पाता है। वह अपने कर्तव्य को छोड़कर, सती के सूक्ष्म शरीर को लेकर क्रोध और वेदना से घूमता रहता है। तब देव गण की प्रार्थना पर भगवान विष्णु शिव को साधारण स्थिति में लाने के लिए अपने चक्रायुध से माता सती के शरीर को खंडित करता है तो वह शरीर अठारह टुकड़े होकर भारत देश के विभिन्न भागों में पड़ती है। (दो जगह अब भारत के अंतर्गत नहीं है। एक श्रीलंका और दूसरा पाकिस्तान में हैं) जहाँ-जहाँ ये भाग पड़े हैं, वे ही प्रदेश शक्तिपीठों के नाम से प्रसिद्ध हुए हैं।

अष्टादश शक्तिपीठ स्तोत्र

भारत देश में ऐसे कई लोग हैं, जो हर दिन इस स्त्रोत का पठन करते हैं। अपनी जिंदगी में एक बार इन शक्तिपीठों का दर्शन करना चाहने वाले बहुत सारे श्रद्धालु भक्त हैं।

स्तोत्र

लंकायां शांकरी देवी कामाक्षी कांचिकापुरे।
प्रद्युम्ने श्रृंखलादेवी चामुंडी क्रौंचपट्टणे।।

अलंपुरे जोगुलांबा श्रीशैले भ्रमराम्बिका।
कोल्हापुरे महालक्ष्मी माहुर्ये एकवीरिका।।

उज्ञयिन्यां महाकाली पीठिक्यां पुरुहूतिका।
ओढ्यायां गिरिजादेवी माणिक्या दक्षवाटके।।

हरिक्षेत्रे कामरूपा प्रयागे माधवेश्वरी।
ज्वालायां वैष्णवीदेवी गया मांगल्यगौरिका।।

वाराणस्यां विशालाक्षी काश्मीरेषु सरस्वती।
अष्टादश सुपीठानि योगिनामपि दुर्लभम्।।

सायंकाले पठेन्नित्यं सर्वशत्रुविनाशनम्।
सर्वरोगहरं दिव्यं सर्वसम्पत्करं शुभम्।।

इति अष्टादश शक्तिपीठ स्तोत्रम।

❀❀❀

रामभक्त हनुमान

- डॉ.जी.मोहन नायुडु

विशेष परिस्थितियों में विशिष्ट कार्य संपादन के लिए महान पुरुषों का अवतार होता है। ऐसे महान पुरुषों में हनुमानजी अग्रगण्य है। हनुमान श्रीरामचन्द्र के सेवक और परम भक्त है। इसलिए राम की सेवा एवं उनके कार्य संपादन में लगे हुए हनुमान अपने को धन्य माना। हनुमानजी के चरित्र में बुद्धिमान, पराक्रमी, रामभक्त एवं विद्वान होने के गुण समावेश किये गये।

हनुमान का जन्म :

श्रीराम कार्य के लिए ही हनुमान का अवतार हुआ। एक बार ब्रह्म ने इन्द्र आदि देवताओं से कहा कि लोकरक्षणार्थ विष्णु इस पृथ्वी पर अवतार ले रहे हैं। इसलिए उनकी सहायता के लिए आप लोकहितार्थ, शक्ति संपन्न, पराक्रमी, बल और पराक्रम में अपने समान शक्तिमान कई वानरों को, किन्नर, किंपुरुष, गन्धर्व, खेचर, यक्ष, पन्नग, अमर तथा सिद्ध स्त्रियों के गर्भ से उत्पन्न कीजिए। मैं अत्यंत बलवान जाम्बवान को पहले ही जन्म दे चुका हूँ। मेरे जंहाई लेते समय उसने जन्म लिया। वह चिरंजीव है। इस प्रकार ब्रह्म का आदेश पाकर इन्द्र ने वालि को, अग्नि ने नील को, सूर्य ने सुग्रीव को, वरुण ने सुषेण को, कुबेर ने गंधमादन को, विश्वकर्म ने नल को, अश्विनीकुमारों ने द्विविंद मैंद को, पर्जन्य ने शरभ को और वायु ने हनुमान को इस पृथ्वी पर जन्म दिया।

रामभक्त और रामदूत हनुमान के जन्म एवं जन्मस्थान को लेकर भिन्न-भिन्न मत हैं। हनुमानजी की माता का नाम अंजनी है। इसलिए उनको आंजनेय या अंजनी पुत्र कहते हैं। उनके पिता का नाम केसरी है, जो वानर जाति के है। इसलिए हनुमान को केसरीनंदन भी कहते हैं। पवनपुत्र और रुद्रावतार होने के कारण शंकरसुवन इत्यादि नामों से भी उन्हें पुकारते हैं।

वेंकटाचल (श्री वेंकटेश्वर का निवास स्थान) को अंजनाद्रि सहित उन्नीस नामों से पुकारा जाता है और त्रेतायुग में अंजनाद्रि पर हनुमानजी का जन्म हुआ। श्री वेंकटाचल माहात्म्य और स्कन्द पुराण में बताया गया कि अंजना देवी ने मतंग ऋषि के पास जाकर पुत्र प्राप्ति का मार्ग बताने के लिए विनती की थी। उनके सुझाव के अनुसार माता अंजना देवी वेंकटाचल पहाड पर तपस्या करने हेतु चली गई और कई वर्षों की तपस्या के बाद उन्हें हनुमान के रूप में पुत्र प्राप्त हुआ। यह भी कहा जाता है कि वेंकटगिरि से ही हनुमान ने सूर्य की तरफ छलांग मारी थी। जब इन्द्र ने हनुमान पर वज्रायुध से प्रहार किया तो हनुमान नीचे गिर पडा तब अंजना देवी अपने पुत्र के लिए रोने लगी। इसको देखकर सभी देवताओं ने मिलकर उन्हें वर प्रदान किया तभी से इस पर्वत का नाम अंजनाद्रि हो गया।

रामभक्त हनुमान की वीरता एवं साहस की कई पौराणिक कथाएँ प्रचलित हैं। हनुमान को चिरंजीवी होने का वर भी मिला। हिंदू धर्म में हनुमान भगवान श्रीराम के भक्त एवं सेवक का प्रतीक है। उन्होंने अपना समस्त जीवन श्रीरामचन्द्रजी को समर्पित कर दिया। हनुमान को महावीर, बजरंगबली, पवनपुत्र, अंजनीपुत्र आदि 108 नामों से पुकारा जाता है।

श्रीरामभक्ति :

राम कार्य के लिए अवतरित होने के कारण उनकी सेवा एवं भक्ति ही हनुमान के जीवन का आदर्श है। इसलिए प्रथम भेंट में ही हनुमान ने अपने आप को पूर्णतः श्रीरामचन्द्र को समर्पित कर दिया। महात्माओं के पास जाते समय रिक्त हस्तों से जाना उचित नहीं है, इसलिए उन्होंने एक फल हाथ में लिए श्रीराम के निकट पहुंचा और बडी भक्ति के साथ उनको समर्पित किया और कहा कि ''हे प्रभु आपकी दृष्टि ने मेरा स्पर्श किया है। मैं विभूषित कृतार्थ एवं धन्य हूँ। मैं आपका प्रिय सेवक हूँ। मैं वायु पुत्र हूँ। मेरा नाम हनुमान है। मैं सूर्य पुत्र सुग्रीव का मंत्री हूँ। मैं भय त्यागकर भिक्षुक के रूप में आपके भेद जानने के लिए आपके पास आया हूँ। इस तरह हनुमान ने राम के पास अपनी भक्ति भावना को स्पष्ट किया तो राम ने भी हनुमान को भरोसा देते हुए उन्हें अपने सेवक तथा भक्त के रूप में स्वीकार किया। इससे हनुमान ने अपने आपको धन्य समझा। हनुमानजी की स्वामी भक्ति, धैर्य, साहस, चातुर्य एवं उदात्त शक्ति को देखकर इन्द्र आदि देवताओं ने भी उनकी प्रशंसा की थी।

हनुमान से संबंधित कुछ मंत्र निम्नांकित है -

हनुमाजी का प्रिय मंत्र :

मनोजवं मारुततुल्यवेगं, जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं, श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये।।

संकट दूर करने के लिए मंत्र :

ॐ नमो हनुमते रुद्रावताराय
सर्वशत्रुसंहारणाय सर्वरोग हराय
सर्ववशीकरणाय रामदूताय स्वाहा।

हनुमानजी का मूलमंत्र :

हं हनुमते रुद्रात्मकाय हुं फट्।
ओम हां हीं हैं हौं हः।।

निष्कर्ष :

रामकार्य के लिए अवतरित होने के कारण श्रीराम की सेवा एवं भक्ति ही हनुमान के जीवन का आदर्श है। हनुमान ने सदैव राम को स्वामी और पिता मानकर सेवक भाव से उनकी सेवा की थी। राम जैसे स्वामी का सेवक बनकर सभ्य और वैभव संपन्न ही नहीं बना, अपितु परम बुद्धिमान, असंभव को संभव बनानेवाला, ज्ञानी, नीतिज्ञ, पराक्रमी, योद्धा, आदर्श सेवक और आदर्श भक्त भी बना। उनके सभी गुण सबके लिए अनुकरणीय हैं।

श्री प्रपन्नामृतम्

(52वाँ अध्याय)

मूल लेखक - श्री स्वामी रामनारायणाचार्यजी

प्रेषक - श्री रघुनाथदास रान्दड

श्री वरदराज भगवान के द्वारा कूरेशाचार्य को दृष्टि प्रदान

एक दिन यतिराज श्री रामानुजाचार्य ने श्री कूरेशाचार्य को अपने समीप बुलाकर कहा कि श्री वरदराज भगवान भक्तों की मनोकामना पूर्ण करने में अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। इसलिये आप उनकी स्तुति में स्तोत्र रचना कीजिये। वे निश्चय ही अपने अलौकिक तेज के माध्यम से आपको नेत्रज्योति प्रदान करेंगे। गुरुदेव के आदेश से महात्मा श्री कूरेशजी श्री वरदराज भगवान की स्तुति में स्तोत्र रचना करने को उद्युत हुये।

''उपमा रहित सर्वोत्कृष्ट जिस देव को उपनिषद् वचनों से जाना जाता है। वह कल्याणस्वरूप हस्तगिरिभूषण भगवान श्री वरदराज अहर्निश मेरा कल्याण करें।'' इन वचनों से स्तोत्र प्रारम्भ करके उन्होंने बहुत से सुन्दर श्लोकों से युक्त स्तोत्र का निर्माण किया। जिसमें - ''नील मेघ के सदृश्य घुँघराली काली अलकों वाले शेषशायी और कमल के सदृश चरण एवं नेत्र वाले हे भगवान! मैं आपको प्रणाम करता हूँ। आप मुझे नेत्रज्योति प्रदान करें। हे कमलनयन! उक्त श्लोक के अर्थ के सदृश रूप प्रदर्शन विधि में मुझे योग्य तथा दिव्य नेत्र प्रदान कीजिये।'' इस तरह से श्री कूरेशाचार्य ने श्री वरदराज भगवान की प्रार्थना की। रात्रि में शयन करने पर आपको स्वप्न में श्री वरदराज भगवान ने कहा कि- मैं तुम्हें दिव्य चक्षु प्रदान कर रहा हूँ।'' प्रातःकाल उठकर नित्यकर्म से निवृत्त होकर महाकवि श्री कूरेशाचार्यजी देवराज स्तोत्र को पूर्ण करके यतिराज रामानुजाचार्य के मठ में उनके साथ आये और साष्टांग प्रणाम करके निवेदन किया कि आपके आदेश से मैंने श्री वरदराज भगवान के इस स्तोत्र की रचना की है। और फिर उन्होंने स्वरचित देवराज स्तोत्र उनको सुनाया। स्तोत्र को सुनकर यतिराज बहुत प्रसन्न हुये और उन्होंने कूरेश की काव्य प्रतिभा और भगवान गुणानुवाद की प्रशंसा की। तब श्री कूरेशाचार्य ने कहा कि भगवान से मैंने जिस वरदान की याचना की है, वह भी मैं आपकी सेवा में निवेदन करता हूँ।

''हे देवराज! श्रेष्ठ लोक वैकुण्ठ में नित्यसूरिजन अपने दिव्य नयनों के द्वारा सदैव आपके दर्शन करते

रहते हैं। उनकी तरह ही मुझे भी उस वैकुण्ठ दर्शन के साधनभूत दिव्य चक्षु प्रदान कीजिये।''

स्तोत्र का भाव सुनकर यतिराज बड़े ही प्रसन्न हुये एवं श्री कूरेश को साथ लेकर तत्काल कांची के लिये चल पड़े। कांची पहुँच करके पहले तो दोनों ने श्री वरदराज भगवान को प्रणाम किया और फिर आचार्य की आज्ञा से श्री कूरेश ने स्वरचित स्तोत्र भगवान को सुनाया। स्तोत्र को सुनकर श्री वरदराज भगवान ने श्री कूरेश से प्रसन्नतापूर्वक अभिलषित वर माँगने के लिये कहा। तब तो फिर भगवान के वचनों को श्रवण करते हुए श्री कूरेश ने उनसे यतिराज के मनोनुकूल वरदान देने की याचना की, और फिर उनसे कहा कि- ''हे भगवान! आपकी कृपा से यह अकिंचन दास आपके नित्य श्रीवैकुण्ठधाम को प्राप्त करे?'' भगवान ने कहा- ''तथास्तु! ऐसा ही होगा।''

यह सुनकर यतिराज श्री रामानुजाचार्य अत्यन्त उदास होकर भगवान से बोले कि- ''आपने सर्वज्ञ होकर श्री कूरेश को इस प्रकार का वरदान क्यों दिया? क्या दिव्य नेत्रों को पाकर के यह चर्मचक्षुओं के अभाव से आजीवन दृष्टिहीन ही रहेगा? आपको इसके बारे में भी तो कुछ सोचना चाहिये था?'' फिर आपने श्री कूरेश से कहा कि- ''तुमने मेरे आने से पूर्व ही भगवान से ऐसा पारलौकिक वरदान माँग करके मेरी आज्ञा का उल्लंघन किया है।'' यह कहकर खेदपूर्वक विचार करने लग गये कि- ''अब क्या किया जाय! कोई अन्य उपाय भी तो नहीं है। जिससे कि कूरेश को नेत्र-ज्योति मिल जाय।'' ऐसा विचार करते हुये उद्विग्न होकर वे वहीं पर ठहर गये।

जैसे कि कोई धनवान व्यक्ति धन नष्ट हो जाने पर किंकर्तव्य विमूढ़ होकर अपने स्थान पर ही स्थिर हो जाता है। ठीक वैसे ही यतिराज स्थिर हो गये। यह देखकर श्री वरदराज भगवान ने स्वप्न दिया कि- ''हे यतिराज! तुम शोक मत करो। मैं आपका अभीष्ट वर दे रहा हूँ।'' यह कहकर भगवान श्री वरदराज ने कूरेश को चर्मचक्षु प्रदान कर दिये। जिसको प्राप्त कर उन्होंने भगवान के चरणारविन्दों से लेकर उनके मस्तक पर्यन्त श्रीविग्रह का दर्शन किया और आनन्दाश्रु बहाने लगे। फिर अपने गुरुदेव आचार्य श्री यतिराज का भी दर्शन करके अत्यन्त ही आनन्दित हुए।

भगवान श्री वरदराज के द्वारा अपने प्रिय शिष्य श्री कूरेश के अभीष्ट की पूर्ति करके यतिराज श्री रामानुजाचार्य श्रीसत्यव्रत क्षेत्र (कांची) से प्रस्थान कर श्रीरंगम् आ गये।

।।श्री प्रपन्नामृत का 52वाँ अध्याय पूर्ण हुआ।।

क्रमशः

जनवरी 2025

01 नूतन अंग्रेजी वर्ष
06-12 श्री आंडाल नीराट्टोत्सव
08-12 तिरुपति श्री कपिलेश्वरस्वामी का प्लवोत्सव
10 वैकुंठ एकादशी
11 श्री स्वामिपुष्करिणी तीर्थ मुक्कोटी
13 भोगी
14 मकर संक्रांति
15 कनुमा, श्री गोदादेवी का परिणयोत्सव
26 भारत गणतंत्र दिवस
29 जनवरी से 6 फरवरी तक देवुनीकडपा श्री लक्ष्मी वेंकटेश्वर स्वामी का ब्रह्मोत्सव

सदाचार

- डॉ.रमेश कृष्णा

श्रीसदाचार का अर्थ होता है उत्तम आचरण या उत्तम पुरुषों का आचरण। सदाचार ही मानव को अन्य प्राणियों से अलग करके मानव बनाता है क्योंकि मानव दूसरे प्राणियों की तरह प्रकृति के अनुसार न चलकर अपनी बुद्धि से कुछ सोच-विचार करके जीवन चलाता है। परिस्थितियों के अनुसार अपने आचरण को इस प्रकार बदलाने की शक्ति सिर्फ मानव को है। लेकिन दुर्भाग्य की बात यह है कि कई मानवों को यह नहीं मालूम कि वे क्यों जी रहे हैं, किस के लिए जी रहे हैं और कैसे जी रहे हैं। मानवों के जीवन विधानों पर हमारे महर्षियों ने कई शोधकार्य किये और उन-उन संशोधों के आधारों पर उन्होंने हमारे लिए एक विशेष जीवन विधान निर्धारित किया जिसे हम सदाचार कहते हैं।

महाभारत में बताया जाता है - 'आचार प्रभवो धर्मः, धर्मस्य प्रभुरच्युतः' यानी धर्म का मूल भी हमारा आचरण ही होता है। यानी आचार से बढ़ कर कोई धर्म है ही नहीं और धर्म ही भगवान है। इसी की पुष्टि करते हुए गीता में भी कहा गया है - 'यद्यदाचरति श्रेष्ठः तत्तदेवेतरो जनाः, स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते' यानी उत्तम व्यक्ति जो भी आचरण करके दिखाते हैं उसी को दूसरे भी आचरण में रखते हैं और इस प्रकार आचार बन जाता है। सदाचार से हमें इस लोक में सुख मिलता है और परलोक का अनंत आनंद भी मिलता है।

हमारा आचरण ही आचार बनता है जिसे हम साधारणतया 'प्रथा' कहते हैं। जब तक हमारे काम करने का तरीका अपने तक ही सीमित हो यानी व्यक्तिगत हो तब तक वह स्वीय आचरण होता है। लेकिन जब वही पूरे समाज के जीवन का तरीका बन जाता है तब वह प्रथा बन जाता है। हमारे सभी काम-काज इन्हीं प्रथाओं के अंतर्गत ही आते हैं। ऐसी स्थिति में यह कहना भी गलत हो सकता है कि हम से किये जानेवाले सभी काम सदाचार ही हैं। इसीलिए इन आचरणों को अनाचार, दुराचार, मिथ्याचार, कदाचार, अत्याचार, सदाचार आदि कई रूपों में विभाजित कर सकते हैं।

जिस काम को जैसे करना होगा, उसके ठीक विपरीत करें तो उसे अनाचार कहते हैं। अगर आपको बताया गया है कि आप सुबह-सुबह उठ जाता, लेकिन आप सुबह न उठकर बहुत समय होने के बाद उठना शुरू करें तो उसे अनाचार कहते हैं।

जिन कामों को कभी न करने को कहा गया हो और आप उन्हीं को कर रहे हों तो वह दुराचार होता है। जैसे प्राणियों की हिंसा करना, बड़ों का अनादर करना, अधिक स्वाभिमानता दिखाना, अपनी इच्छा के अनुसार रहना आदि सब नहीं करने को कहा गया है। लेकिन यही करने में अगर कोई लगा रहे तो उसे दुराचार कहते हैं।

मिथ्याचार दो प्रकार का होता है - एक सीमा से बाहर होनेवाला आचरण और एक ढोंगी आचरण। हमारे महर्षियों ने पलंग से उठने से लेकर फिर पलंग पर जाने तक जो-जो काम कब-कब करना है उन सब को एक योजना के अनुसार हमें बताया। लेकिन कुछ लोग उन्हें न समझ कर अपनी-अपनी सोच के अनुसार नये अर्थ निकाल कर उनके आचरण में एक नया स्तर लाने का प्रयत्न करते रहते हैं। ऐसा करने में उनका ढ़ोंगी अभिमान भी हो सकता है कि मैं ही महान हूँ और मैं जो आचरण करता हूँ वही उत्तमोत्तम आचरण है। इस प्रयत्न में वे अपने आचरण से जो उदाहरण हमारे सामने रखते हैं उनमें न

कोई आत्मश्रेय रहता और न समाज का श्रेय। यानी जिस महान उद्देश्य से हमारे महर्षियों ने हमें सदाचार का मार्ग बताया उसकी पूर्ति नहीं होगी और उल्टे ऐसे आचरण से लोग विमुख हो जाते हैं। इस प्रकार के आचारों को हम मिथ्याचार कहते हैं। जिसको जहाँ तक करना है वहीं तक करना है नहीं तो वही मिथ्याचार बन जाता है। इसीलिए एक कहावत है संस्कृत में - 'अति सर्वत्र वर्जयेत्।' इसी विषय को स्पष्ट करता है एक फुटकर कविता जिसमें बताया गया है कि दान करना तो सदाचार है लेकिन नियंत्रण में न रह कर अधिक से अधिक दान करके सम्राट बलि ने अपना नाश स्वयं मोल लिया। काम यानी इच्छाओं की पूर्ति करना हर एक का साधारण स्वभाव है, लेकिन अधिक काम परवशता के कारण नाश हुआ रावण। लोभ आम तौर पर हर एक में रहनेवाला गुण तो है लेकिन अधिक लोभ के कारण नाश हुआ दुर्योधन। गुस्सा करना तो हर एक के स्वभाव में है लेकिन अधिक क्रोध के कारण नाश हुआ विश्वामित्र।

इन सब के जीवन में इन्होंने जो भी कष्ट पाये उन सब का एक मात्र कारण अपने आचरण में एक सीमा नहीं रखना। वैसे ही कुछ लोग ऐसे होते हैं जो ऊपर से अच्छे करते दिखाई तो देते हैं लेकिन अंदर से उनको स्वयं उन आचरणों पर कोई विश्वास नहीं रहता और सिर्फ नाम के लिए ऐसा आचरण करते रहते हैं। समाज में ऐसे कई ढोंगी नेताओं, बाबाओं और संत बुलाये जानेवालों को भी हम देख सकते हैं। इन सभी उदाहरणों से हमें सदाचार और मिथ्याचार का अंतर स्पष्ट होता है।

जिस प्रकार सत्पुरुषों से आचरण में लाये गये काम सदाचार कहलाते गये उसी प्रकार दुष्टों से आचरण में लाये गये काम कदाचार कहलाये जाते हैं। यह हमारा दौर्भाग्य है कि समाज में महात्माओं का अनुसरण जितना होता है उतना ही अनुसरण बुरे लोगों का भी होता रहता है और कभी-कभी उनसे भी अधिक इन ढोंगी नेताओं का। उनके बुरे आचरण में लोग कहीं एक अच्छाई देखते हैं और उसी को पकड़ कर उसके सभी कामों को महान मान कर उनका आचरण करना शुरू करते हैं। इस प्रकार कई खलनायक महान नेता बन जाते हैं।

आजकल कई सिनेमाओं के माध्यम से यह बताया जाने की चेष्टा हो रही है कि उन खलनायकों में एक ऐसा महानायक छिपा हुआ है जो वास्तव में समाज को नई दिशा दिखा सकता है। इस कदाचार से समाज को सतर्क होने की आवश्यकता है।

'अत्याचारस्तु मूर्खता' कहा गया है। यानी मूर्खता से जो काम करते रहते हैं उसे अत्याचार कहते हैं। किसी सोच-विचार के बिना समाज में एक आचरण को बलात्कार लागू करें तो वह अत्याचार कहलाया जाता है। यह तो हम सब जानते हैं कि एक जमाने में सती प्रथा, बाल्यविवाह, कन्याशुल्क आदि अत्याचारों से समाज में कितना उथल-पुथल मचला था।

महात्माओं का आचरण ही सदाचार का एकैक लक्षण बताया गया है। जो भी सदाचार समाज में स्थिरता पाते हैं वे ही ऋषियों एवं मुनियों की सहमति से धर्मों के रूप में बदल जाते है। उसी धर्म का पालन हमें करना चाहिए। देश, काल और पात्रों के अनुसार आचरणों एवं प्रथाओं में अंतर हो सकता है। उन-उन 'परिस्थितियों के अनुसार अगर वे आचरण व्यक्ति एवं समाज के कल्याणकारी बनें तो उन आचरणों को हमें सदाचारों के रूप में ही मानना चाहिए। लेकिन किस काम को अपनाना है और किसको छोड़ना है - यह तय करना बहुत मुश्किल होता है। आम तौर पर हर एक इस दुविधा में हमेशा पड़े रहते हैं। आखिर गीता भी यही कहती है- किं कर्म किमकर्मेति कवयोप्यत्र मोहिताः - लेकिन इससे बचने का आसान तरीका भी है। वह यह है कि महात्माओं की जीवन शैलियों को देखो, परखो और उसे अपने आचरण में रखो। सदाचारियों का स्वागत करने के लिए पवित्र तीर्थ भी इंतजार करते रहते हैं। क्योंकि जब ये सदाचारी उनमें नहायेंगे तो दुराचारियों के नहाने से जो पाप उनको लगते हैं वे भी दूर हो जाते हैं और वे फिर से पुण्य तीर्थ बन जाते हैं। इस प्रकार सदाचारियों का जीवन परम पवित्र होता है।

विष्णुपुराण बताता है कि सदाचारियों से ही यह भूमि स्थिरगति से चल रही है, नहीं तो उथल-पुथल हो जाएगा। वामन पुराण बताता है कि सदाचार नामक वृक्ष का मूल-धर्म है, शाखा-अर्थ है, फूल-काम है और फल-मोक्ष है।

अच्छे विचारों से सदाचार का प्रारंभ होता है। पश्चिमी वेदांतियों ने सदाचार यही माना। लेकिन भारतीय विचारधारा ने इन्हीं विचारों को आचरण तक लाकर उसी को सदाचार माना। इस प्रकार हम भारतीयों का सनातन धर्म सदाचार को पश्चिमी विचारधारा से आगे लाकर हमें एवं विशिष्ट स्थान दिलाया। इसलिए ऐसे सदाचारों को अपनाना हम सबका कर्तव्य है।

❀❀❀

तिरुमल में दर्शनीय क्षेत्र

स्वामिपुष्करिणी : मंदिर के निकट स्थित यह तालाब अतिपवित्र है। यात्री मंदिर में प्रवेश करने के पूर्व इसमें स्नान करते हैं। आत्मा व शरीर की शुद्धि के लिए यहाँ स्नान करना श्रेष्ठ है।

आकाश गंगा : मंदिर की उत्तरी दिशा में लगभग ३ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

पापविनाशनम् : मंदिर की उत्तरी दिशा में ५ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

वैकुंठ तीर्थ : मंदिर की ईशान दिशा में लगभग ३ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

तुम्बुरु तीर्थ : मंदिर की उत्तरी दिशा में १६ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

भूगर्भ तोरण (शिलातोरण) : यह अपूर्व भूगर्भ शिलातोरण मंदिर की उत्तरी दिशा में १ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

ति.ति.दे. बगीचे : देवस्थान के आध्वर्य में सुंदर व आकर्षक बगीचे लगे हुए हैं, जिन में विशिष्ट पेड व पौधे मिलते हैं।

आस्थान मंडप (सदस हाल) : यहाँ धर्म प्रचार परिषद् के आध्वर्य में धार्मिक कार्यक्रम मनाया जाते हैं। जैसे भाषण, संगीत-गोष्ठी, हरिकथा-गान एवं भजन।

श्री वेंकटेश्वर ध्यान ज्ञान मंदिर (एस.वी. म्यूजियम्) : इस कलात्मक सुंदर भवन में एक म्यूजियम्, ध्यान केंद्र तथा छायाचित्र-प्रदर्शिनी आयोजित है।

ध्यान केंद्र : तिरुमल के एस.वी. म्यूजियम् एवं वैभवोत्सव मंडप में स्थित ध्यान केंद्रों में भगवान पर ध्यान केंद्रित कर भक्त शांति को प्राप्त कर सकते हैं।

(आयुर्वेद)

मूली की उपचार शक्ति

- डॉ.सुमा जोषि

मूली एक जडवाली सब्जी है जो अपनी कुरकुरी बनावट और चटपटे स्वाद के लिए जानी जाती है। वे लाल, सफेद, गुलाबी और बैंगनी सहित विभिन्न आकार और रंगों में आते हैं। मूली का उपयोग अक्सर सलाद, सजावट और व्यंजनों में कुरकुरे व्यंजन के रूप में किया जाता है। वे विटामिन-सी और बी-6, पोटेशियम और अन्य पोषक तत्वों से भरपूर हैं, जो उन्हें सन्तुलित आहार के लिए एक स्वस्थ अतिरिक्त बनाता है। मूली को कच्चा अचार बनाकर या पकाकर खाया जा सकता है। जड और पत्तेदार साग दोनों ही खाने योग्य होते हैं।

मूली का वैज्ञानिक नाम है Raphanus Sativus. और इसका कुल है Brassicaceae. इसकी एक मोटी, मांसल जड होती है जो आकार (गोल, अण्डाकार या लम्बी) और रंग में भिन्न हो सकती है।

पौधे में हरे, लोबदार पत्तों की एक समूह होती है और छोटे, सफेद से बैंगनी रंग के फूल पैदा होते हैं। मूली आमतौर पर तेजी से बढ़ती है, कुछ किस्में तो तीन सप्ताह से भी कम समय में पक जाति हैं। वे ठण्डी जलवायु और अच्छी जल निकासी वाली उपजाऊ मिट्टी में पनपते हैं।

आयुर्वेदिक गुण

रस (स्वाद) : तीखा (कटु) और थोडा कडवा (तिक्त)।

गुण : हल्का (लघु), सूखा (रूस)।

वीर्य (शक्ति) : ताप / गरम (उष्ण)।

विपाक (पाचनोत्तर प्रभाव) : तीखा (कटु)।

आयुर्वेद मूली को शारीरिक ऊर्जा या दोषों (वात, पित्त और कफ) को सन्तुलित करने के लिए एक शक्तिशाली उपकरण मानता है। अपने अद्वितीय तापन गुण के कारण, मूली अग्नि (पाचन अग्नि) को उत्तेजित करने में विशेषरूप से कुशल है, जो कुशल पाचन और चयापचय के लिए आवश्यक है।

मूली के स्वास्थ्य लाभ

मूली में मौजूद फाइबर आन्त के स्वास्थ्य को बढ़ावा देता है, जबकि उनका मसोलदार स्वाद पाचन प्रक्रिया को तेज करता है। प्राकृतिक डिटॉक्सिफायर के रूप में कार्य करते हुए, मूली रक्त और आकृत को साफ करने, विषाक्त पदार्थों को बाहर निकालने और शरीर को शुद्ध करने में मदद करती है। मूली के पत्तों में जीवाणुरोधी गुण होते हैं जो बवासीर की स्थिति का इलाज करने में काफी मदद करते हैं। अधिकतम परिणामों के लिए मूली के पत्तों, खासकर सूखे पत्तों को कुचलकर बारीक पाऊडर बना लें, इसमें चीनी और पानी मिलाएँ, अच्छी तरह मिलाएँ (पेस्ट बनाएँ) और रोजाना सेवन करें। वैकल्पिक रूप से, कुछ राहत के लिए सूजनवाली जगह पर पेस्ट भी लगा सकते हैं। मूली के पत्ते आयरन और विटामिन-सी से भरपूर होते हैं और आयरन की कमी, कम हीमोग्लोबिन स्तर, अत्यधिक कमजोरी और थकानवाले लोगों के लिए अद्भुत काम कर सकते हैं।

मूली के पत्तों में मौजूद उच्च फॉस्फोरस सामग्री इसे प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ावा देने के लिए महत्वपूर्ण बनाती है। मूली के पत्ते आहार फाइबर का एक समृद्ध स्रोत हैं और

अपने प्राकृतिक रेचक और मूत्रवर्धक गुणों (विटामिन बी-6 होते हैं) के लिए भी जाने जाते हैं जो क्रमशः कब्ज और गुर्दे की पथरी या पित्ताशय की पथरी जैसी स्थितियों का ख्याल रखते हैं। मूली के पत्ते रक्त शर्करा के स्तर को नियन्त्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं मधुमेह के रोगियों के लिए इसकी अत्यधिक अनुशंसा की जाती है।

मूली के पत्ते, चीनी (दोनों को समान मात्रा में लें) और पानी का लेप घुटनों के जोडों पर लगाने से गठिया के कारण होनेवाले दर्द और परेशानी से राहत मिलती है। मूली के पत्तों में एंटीसेप्टिक गुण होते हैं और यह प्राकृतिक मॉइस्चाइजर के रूप में काम करते हैं। इस प्रकार, मूली के पत्ते त्वचा की असंख्य समस्याओं जैसे सूखी और फटी त्वचा, चकत्ते आदि का ख्याल रखते हैं। मूली के पत्तों के सेवन से सर्दी और अन्य श्वसन संक्रमण और परेशानी से राहत मिलती है। मूली के पत्तों में मौजूद फ्लेवोनोइड्स एंथोसायनिन विभिन्न हृदय रोगों और हृदय सम्बन्धी विकारों के जोखिम को कई गुना कम कर देता है।

मूली के पत्ते अपने कैंसररोधी और सूजनरोधी गुणों के लिए भी जाने जाते हैं और कैंसर सहित कई स्वास्थ्य स्थितियों को दूर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मूली के पत्तों को पीसकर मलमल के कपडे की सहायता से उसका रस निकाल लें। इस रस का 1/2 लीटर, 10 दिनों तक सेवन करें। यह पीलिया (Jaundice) और हाइपरबिलिरूबिनमिया की स्थिति में सुधार करने में सहायक है। 1-2 बडे मूली को अच्छे से काटकर 3-4 कप पानि में, एक से दो घंटे रखें। बाद में इस पानी को छानकर दिन भर पीने के लिए प्रयोग करें। यह वजन घटाने में मददकार है। 1/2 कप मूली के रस+1/2कप पानी+एक चमच निम्बु का रस इसे 30-40 दिन तक हर सुबह खाली पेट लें। इससे खराब Cholestrol की मात्रा घट जाती है।

ताजे हरें मूली के पत्तों के रस 40-50ml दिन में दो बार खाने से पूर्व लेने पर आंखों की समस्यायें जैसे- आंखों में जलन, पानी आना, खुजली कम हो जाती है। कहा जाता है की रतौन्धी (रात को कम दिखना या ना दिखना) में भी उपयोगी है। 1-2 चमच मूली के फल + 50ml मूली का रस + 100ml सरसों का तेल, तेल से नमी खत्म होने तक पकाना चाहिए। बाद में इसे छानकर रख लें। इस तेल का नियमितरूप लगाने से ल्यूकोडर्मा में सहायक होता है। साथ में वैद्य द्वारा दियागया अभ्यन्तर औषधियाँ भी लेना आवश्यक है।

मूली लिवर को डिटॉक्सीफाई करने और रक्त को शुद्ध करने में मदद करती है। मूली सूजन को कम करता है, और दर्द और सूजन से राहत दिलाने में मदद करता है। मूली कैल्शियम और मैग्नीशियम प्रदान करती है, जो हड्डियों को मजबूत बनाये रखने और ऑस्टियोपोरोसिस को रोकने के लिए आवश्यक खनिज हैं।

मूली प्रयोग - सावधानियाँ

मूली को दूध, मछली और उडद के साथ नहीं खाना चाहिए। कच्चे मूली में ऐसे रसायन होते हैं जो थायरॉइड के कार्य को अवरुद्ध कर सकते हैं जिन्हें गोइट्रोजेन कहा जाता है। ये रसायन भाप में पकाने या पकाने से आसानी से निष्क्रिय हो जाते हैं। मूली का अधिक सेवन करने से पेट में जलन और पेट फूलने की समस्या हो सकती है।

कुछ व्यक्तियों को मूली से एलर्जी हो सकती है, उन्हें खुजली, दाने या सांस लेने में कठिनाई जैसे लक्षण अनुभव हो सकते हैं। जबकी मूली आमतौर पर गर्भावस्था और स्तनपान के दौरान सुरक्षित होती है, इसे कम मात्रा में सेवन करने की सलाह दी जाती है। इसके अधिक सेवन से पाचन सम्बन्धी समस्याएँ हो सकती है।

यहाँ पर जानकारी के लिए दी गयी है, अपने वैद्य के सलाह पर प्रयोग करें।

''स्वस्थ रहें। सुरक्षित रहें।''

आइये, संस्कृत सीखेंगे..!!!

लेखक - महामहोपाध्याय काशिकृष्णाचार्य
आयोजक - आचार्य के.रामसूर्यनारायण
अनुवाद - श्री अवधेष कुमार शर्मा

पञ्चत्रिंशः पाठः - पैंतीस वाँ पाठ

धातवः धातु

‘अस्’ होना

वर्तमानः	भूतः	आशीराद्यर्थकः	विध्याद्यर्थकः	भविष्यत्कालः
ए ब	ए ब	ए ब		
प्र अस्ति-सन्ति	आसीत् आसन्	अस्तु-सन्तु	प्र स्यात् - स्युः	‘अस्’ इति धातोः ‘भू’ धातोः भविष्यत्कालः एव न तु अन्यः।
असि-स्थ	आसीः- आस्त	एधि-स्त	म स्याः - स्यात	
उ अस्मि-स्मः	आसम्-आस्म	असानि-असाम	उ स्याम्-स्याम	

कृ - करें

वर्तमानः	भूतः	आशीराद्यर्थकः	विध्याद्यर्थकः	भविष्यत्कालः
प्र करोति - कुर्वन्ति	अकरोत्-अकुर्वन्	करोतु - कुर्वन्तु	प्र कुर्यात् - कुर्युः	प्र करिष्यति - करिष्यन्ति
म करोषि - कुरुथ	अकरोः - अकुरुत	कुरु - कुरुत	म कुर्याः - कुर्यात	म करिष्यसि - करिष्यथ
उ करोमि - कुर्मः	अकरवम् - अकुर्म	करवाणि - करवाम	उ कुर्याम - कुर्याम	उ करिष्यामि - करिष्यामः

यु - होना

वर्तमानः	भूतः	आशीराद्यर्थकः	विध्याद्यर्थकः	भविष्यत्कालः
प्र भवति - भवन्ति	अभवत् - अभवन्	भवतु - भवन्तु	प्र भवेत् - भवेयुः	भविष्यति - भविष्यन्ति
म भवसि - भवथ	अभवः - अभवत	भव - भवत	म भवेः - भवेत	भविष्यसि - भविष्यथ
उ भवामि - भवामः	अभवम् - अभवाम	भवानि - भवाम	उ भवेयम् - भवेम	भविष्यामि - भविष्यामः

अधः लिखिताः धातवः प्रायः ‘भू’ धातुरिव भवन्ति।

दिसंबर महीने का राशिफल

- डॉ.केशव मिश्र

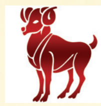

मेष राशि - कर्कराशिगत मंगल वक्री होने से घरेलु सुखों में कमी होगी। स्वास्थ्य चिंता, नित्यकर्म में व्यवधान, तनाव-विवाद से कष्ट व अशांति व्याप्त रहेगी। शैक्षणिक गतिरोध, आर्थिक संतुलन, दाम्पत्य जीवन में मनमुटाव एवं कलह। अचानक धन लाभ, उत्तरोत्तर प्रगति होगी।

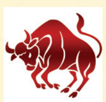

वृषभ राशि - मासफल मध्यम रहेगा। दैनिक कार्यों में प्रगति, व्यवस्थित दिनचर्या, आर्थिक संतुलन, परिश्रमानुकूल सफलता। भाग्य से धन प्राप्ति और मान-सम्मान, प्रतिष्ठा में वृद्धि, सामाजिक संलग्नता, रोजी-रोजगार में प्रगति। यत्र तत्र सुखद यात्रा। सदा सजग बनकर रहना होगा, छात्रों की प्रगति।

मिथुन राशि - व्यावहारिक कुशलता में वृद्धि। बुध अष्टमस्थ वक्री रहने से व्यवसाय सम्बन्धी संघर्षपूर्ण परिस्थितियों का सामना रहेगा। सत्कृत्य से आत्मिक सुख, संयमित व्यवहार, आध्यात्मिक कार्यों से कार्य-व्यापार में सफलता। विशिष्ट लोगों से सम्पर्क होने से लाभ।

कर्कटक राशि - अपने कुशल व्यवहार से किसी कामों में सफलता पा सकते हैं। घरेलु एवं व्यवसाय सम्बन्धी परेशानियाँ, स्वस्थ शरीर रहने से मन प्रसन्न रहेगा। उद्योग-व्यापार में श्रमपूर्ण सफलता, शैक्षणिक प्रगति होने से हर्षोल्लास, अपने मित्रों का सहयोग।

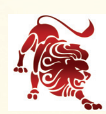

सिंह राशि - मासफल शुभ फलदायक रहेगा। परिश्रम के द्वारा निर्वाह योग्य धन लाभ होगा। अपने वाक्पटुता से प्रगति का मार्ग प्रशस्त होगा। निरर्थक तनाव-विवाद से दूरी बनाकर रखे उलझनों में पर सकते हैं। आर्थिक विकास, उद्योग-व्यापार में सफलता, मांगलिक कार्यों पर धन का व्यय अधिक होगा, मनोरंजन में वृद्धि होगी।

कन्या राशि - स्वास्थ्य उत्तम, निर्वाह योग्य धन के साधन बनते रहेंगे। परन्तु बुध तृतीयस्थ व केतु के कारण परिस्थितियाँ संघर्षपूर्ण रहेंगी। धन, अन्न, वस्त्र लाभ, भौतिक सुखों की वृद्धि, धर्माचरण में प्रवृत्ति। आराम कम दौड़-धूप, व्यस्तता अधिक रहेगी, कौटुम्बिक सुख, आर्थिक उन्नति, सामाजिक-धार्मिक कार्यों में संलग्नता, शत्रु विजय, बनते कार्यों में रुकावट।

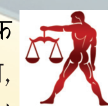

तुला राशि - शारीरिक परेशानी, मानसिक-शारीरिक व्यथा। वाहनादि भौतिक सुखों पर खर्च अधिक रहेगा, तनाव-विवाद से मन खिन्न रहेगा, चोट-दुर्घटना से कष्ट। सामयिक कार्यों में श्रमपूर्ण प्रगति, व्यापार सामान्य, उत्तरार्ध में शक्ति संवर्धन, विरोधियों द्वारा बनते कामों में अड़चनें पैदा करने से धन हानि, उत्तरार्ध में आर्थिक समुन्नति।

वृश्चिक राशि - शनि की ढैया के कारण व्यवसाय के सम्बन्ध में संघर्षपूर्ण परिस्थितियों का सामना रहेगा। सकारात्मक परिवर्तन, लाभ के अनेक अवसर मिलेंगे परन्तु सोच समझकर निवेश करें। सम्मान-प्रतिष्ठा से जीवनयापन, उद्योग-व्यापार में सफलता। पारिवारिक मनमुटाव, सन्तान चिन्ता।

धनुष राशि - अन्न-धन-वस्त्रादि की प्राप्ति। संघर्ष के बावजूद धन लाभ के साधन बनते रहेंगे, भूमि, जायदाद एवं वाहनादि पर खर्च अधिक होगा। शक्ति संवर्धन, स्त्री सुख एवं परिवार में खुशी का प्रेम सम्बन्धों में प्रगाढ़ता किन्तु विचारों में उग्रता। विशिष्टजनों का सहयोग,मासान्त में बनते कामों में अड़चनें पैदा होंगी।

मकर राशि - इस मास में सूर्य मंगल के दृष्टि प्रभाव से मुक्त हो जायेंगे। फलतः अनेक रुकावटें दूर होंगी, संघर्षपूर्ण परिस्थितियों के बावजूद व्यवसाय में धन लाभ एवं पदोन्नति के योग हैं। सामयिक विकास, आर्थिक सफलता। सुखद यात्रा, कुछ बिगड़े कार्यों में सुधार एवं समाज में मान-प्रतिष्ठा बढ़ेगी। विद्या-बुद्धि में वृद्धि।

कुंभ राशि - स्वास्थ्य उत्तम रहेगा। व्यवसाय में अनिश्चितता बनी रहेगी। आय से व्यय अधिक होगा, कला-संगीत में रुचि, राजकीय कार्य में समुन्नति, उद्योग-धन्धे में सोच समझकर निवेश करें, गृह-भूमि, कृषि कार्यों में प्रगति, चोटादि का भय तथा घरेलु उलझनों के कारण आर्थिक परेशानी।

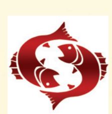

मीन राशि - गुरु वक्री रहने पर भी खर्च अधिक होगा। उत्तम भोजन प्राप्ति, आरोग सुख, अपने मित्रों का सहयोग, उग्र विचारों से मुक्ति। उलझनों के बावजूद जीवन यापन करने योग्य धन प्राप्ति, मास के मध्य से परिस्थितियों में धीरे-धीरे सुधार होगा। बौद्धिक विकास, सौहार्द पूर्ण वातावरण, कौटुम्बि सुख, यत्र-तत्र यात्रा योग बनेगा।

(नीतिकथा)

देवी के दर्शन

श्री के रामनाथन

अनंतपुर में राजा अश्विन का शासन चल रहा था। राजा बड़ा दयालू और दानी भी था। वह अपनी प्रजा की इच्छा समझकर उसके अनुसार अपना शासन कर रहा था। इसलिए उसके राज्य में सारी प्रजा सुखी थीं और देश भी समृद्ध था। यह तो सच है कि जिस देश में प्रजा को सुखमय शासन मिलता है उस देश की अच्छी उन्नति होती है। अनंतपुर इसका अपवाद नहीं था। राजा अश्विन के मन में सदा यही विचार बना रहता था कि अपने देश की प्रजा को अन्य देश से भी सारे सुख प्राप्त हो। वह अपने इस लक्ष्य के लिए अनुभवी मंत्रियों से सलाह पाकर उसके अनुसार कार्य कर रहा था।

समृद्ध देश पर हमला करने के लिए शत्रु सदा तैयार रहेंगे। इस पर राजा अपने देश की रक्षा के लिए सबल सेना का प्रबंध भी कर रखा था। अपनी सीमा की रक्षा के लिए वह उचित प्रबंध कर रखा था। सेना की सहायता के लिए अनेक चरों को भी नियुक्त कर रखा था। उसने अपने चरों को यह आज्ञा दे रखा था कि सीमा पर कोई नया व्यक्ति आये तो तुरंत मुझे सूचित कर देना। वे चर भी अपने कार्य में सदा सतर्क रहते थे।

एक बार उत्तर की सीमा से एक चर राजा अश्विन से मिलने आया। उसने राजा को यह खबर दिया कि राजन्, उत्तर की सीमा में स्थित जंगल में एक साधु आये हैं। यह सुनकर राजा ने पूछा कि उनके आने का क्या कारण है चर ने उसको जवाब देते हुए कहा कि राजन्, वे साधु बड़े तपस्वी हैं। उन्होंने इसको पूर्व देवी काली को प्रसन्न करने के लिए अनेक बार यज्ञ किए हैं। उन्होंने अपने यज्ञ को पड़ोस के देशों में किये थे। पर दुर्भाग्यवश उनको किसी भी स्थान में किये अपने यज्ञ में सफलता नहीं मिली थी और उनको देवी काली के दर्शन नहीं मिले थे। आखिर वे इस विचार यहाँ आये है कि यदि इस देश में यज्ञ करें तो उचित फल की प्राप्ति होगी।

राजा अश्विन को उस चर की खबर सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने अपने मन में सोचा कि वह खुद उस साधु के यहाँ जाकर यज्ञ में भाग लें और यदि देवी प्रकट हो तो उसको भी दर्शन पाने का भाग्य मिलेगा। इसलिए उसने चर से कहा कि कल हम दोनों उस साधु से मिलेंगे। अगले दिन राजा उस चर के साथ उत्तर की दिशा में निकल पड़ा। लंबी यात्रा के बाद वे दोनों उस साधु के यहाँ आ पहुँचे। साधु उस जंगल में एक स्थान पर आश्रम बनाकर यज्ञ करने के लिए उचित तैयारियाँ कर रहे थे।

साधु ने राजा को देखकर प्रसन्न मन से उसका स्वागत किया और आने का कारण पूछा। राजा ने कहा कि ऋषिवर्, मैं आपके यज्ञ में भाग लेने की इच्छा से आया हूँ। अनुभवी लोगों का कथन है कि जिनको यज्ञ में भाग लेने का भाग्य मिलता है उनकी सारी इच्छा परिपूर्ण होती है। इसलिए मैं अपनी इच्छा को पूर्ण करने के लिए आपके यज्ञ में भाग लेने आया हूँ, उसके लिए आपकी अनुमति चाहिए। राजा की इच्छा पर खुश होकर साधु ने भी उसे अनुमति दे दी।

साधु ने अपना यज्ञ प्रारंभ कर लिया। उन्होंने अनेकानेक मंत्रों का उच्चारण करके विभिन्न प्रकार के सुमन तथा सुगंधित वस्तुयें देवी को अर्पण करते हुए अपना यज्ञ कर रहे थे। यज्ञ में अग्नि की ज्वाला तेज बढ़ रही थी। तब साधु ने एक पीले रंग की थैली को उठाया, जिसमें यज्ञकुंड में डालने के लिए अनेक चीजें रखी हुई थीं। साधु ने उस थैली को यज्ञकुंड में डाल दिया। उनके ऐसा करते ही काले रंग में धुएँ उठी और उसके बाद वह ऐसे ही थम हो गयी। यह देखकर साधु उदास हो गये। उन्होंने राजा को देखकर कहा कि राजन्, इस यज्ञ में भी मुझे देवी का दर्शन नहीं मिला।

साधु के सारे कार्य को बड़े ध्यान से देख रहे राजा को उनका ऐसा दुखपूर्ण कथन सुनकर बड़ा धक्का लगा। क्योंकि उसने तो सब देख रहा था कि साधु ने अपने यज्ञ कार्य में कोई कमि नहीं रखी थी। अब राजा ने साधु से निवेदन किया कि ऋषिवर्, यदि आप अनुमति देंगे तो मैं इस यज्ञ को करुँगा। साधु ने भी उसका निवेदन स्वीकार कर लिया।

अब राजा बड़े ध्यान से यज्ञ कार्य कर रहा था। सभी मंत्रों के उच्चारण के बाद उसने पीले रंग की थैली को यज्ञकुंड में डाला। उसके ऐसे डालते ही उस कुंड से हमेशा की तरह काले रंग की धुआँ उठ निकली। साथ ही साथ क्या आश्चर्य, देवी काली भी निकल पड़ी। यह देखकर साधु और राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ। तब राजा ने यही प्रार्थना रखी कि उसके देश की प्रजा को सभी प्रकार के सुख प्राप्त हो और वे सदा अन्य देश की प्रजा से बढ़कर आनंद का जीवन भोगें। देवी ने भी उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ली।

तब राजा ने देवी से अपना संदेह पूछा कि देवी मैंने सिर्फ एक ही बार यज्ञ किया था, जिससे तुम प्रसन्न हो गयी। लेकिन साधु ने ऐसे यज्ञ अनेक बार कर दिये थे। परंतु उनको आपने उचित फल क्यों नहीं दिया? देवी ने उसके संदेह को दूर करते हुए कहा कि जो कोई अपने कार्य में एकचित्त होकर करता है और उसमें स्वार्थ भावना नहीं होती उसी को सफलता होती है। तुम्हारी बात सही है, साधु ने अनेक बार यज्ञ किये थे। परंतु उनका मन सागर के लहरों के बराबर इधर-उधर विभिन्न विचारों से भटक हरा था। इसलिए उसको अपने कार्य में सफलता नहीं मिली। इतना कहकर देवी आँखों से ओझल हो गयी।

यह तो सत्य है कि शास्त्रज्ञान से भी ध्यान श्रेष्ठ है और ध्यान से भी सब कर्मों के फल की इच्छा का त्याग श्रेष्ठ है। गीता का उल्लेख भी यही है।

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्, ज्ञानाद्ध्यानं विशिष्यते।
ध्यानात्कर्मफलत्यागः, त्यागाच्छान्तिरनतरम्।।

❀❀❀

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

लेखक-लेखिकाओं से निवेदन

सप्तगिरि पत्रिका में प्रकाशन के लिए लेख, कविता, रचनाओं को भेजनेवाले कृपया लेखक-लेखिकाओं निम्नलिखित विषयों पर ध्यान दें।

1. लेख, कविता, रचना, अध्यात्म, देव मंदिर, भक्ति साहित्य विषयों से संबंधित हों।
2. कागज के एक ही ओर लिखना होगा। अक्षरों को स्पष्ट व साफ लिखिए या टैप करके मूलप्रति डाक या ई-मेइल (hindisubeditor@gmail.com) से भेजें।
3. किसी विशिष्ट त्यौहार से संबंधित रचनायें प्रकाशन के लिए ३ महीने के पहले ही हमारे कार्यालय में पहुँचा दें।
4. रचना के साथ लेखक धृवीकरण पत्र भी भेजना जरूरी है। 'यह रचना मौलिक है तथा किसी अन्य पत्रिका में प्रकाशित नहीं है।'
5. रचनाओं को प्रकाशन करने का अंतिम निर्णय प्रधान संपादक का कार्य होगा। इसके बारे में कोई उत्तर प्रत्युत्तर नहीं किया जा सकता है।
6. मुद्रित रचना के लिए परिश्रमिक (Remuneration) भेजा जाता है। इसके लिए लेखक-लेखिकाएँ अपना बैंक पास बुक का प्रथम पृष्ठ जिराक्स (Bank name, Account number, IFSC Code) रचना के साथ संलग्न करके भेजना अनिवार्य है।
7. धारावाहिक लेखों (Serial article) का भी प्रकाशन किया जाता है। अपनी रचनाओं को निम्न पते पर भेज दें। पता-

प्रधान संपादक,
सप्तगिरि कार्यालय,
ति.ति.दे.प्रेस परिसर, के.टी.रोड,
तिरुपति – 517 507. चित्तूर जिला।

चित्रकथा

महान दाता कर्ण

तेलुगु मूल - श्री डी.श्रीनिवास दीक्षितुलु
अनुवादक - कुमारी के.वैष्णवी
चित्रकार - श्री के.द्वारकनाथ

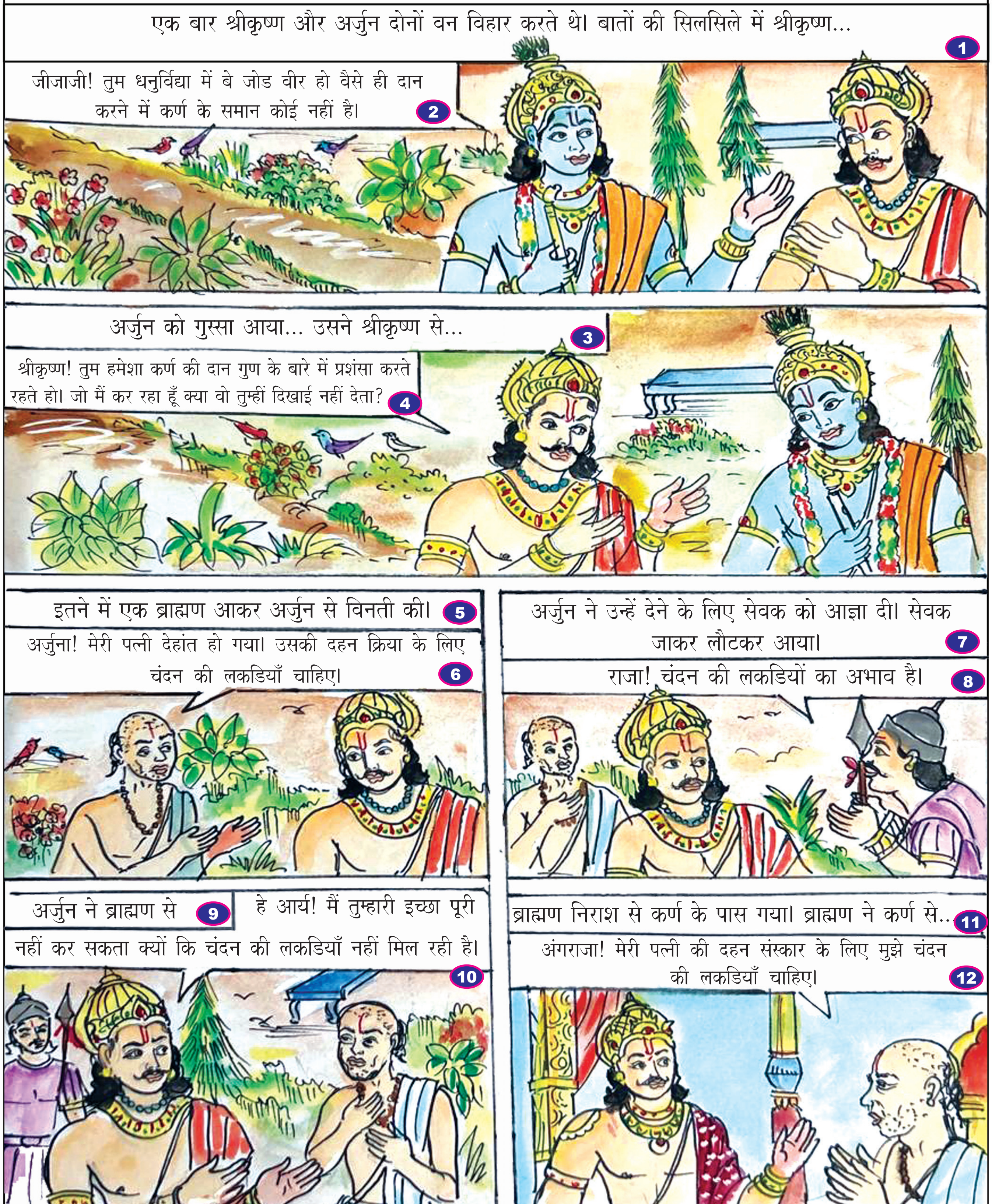

लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु। स्वस्ति।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान,
तिरुपति।

क्विज-29

प्रश्नोत्तरी (क्विज) की नियमावली

1) प्रश्नोत्तरी की प्रतियोगिता केवल 15 वर्षों के अंदर बच्चों के लिए है।
2) भाग लेने वाले बच्चे हिंदु धर्म के होना अनिवार्य है।
3) इस प्रश्नोत्तरी में भाग लेने वाले बच्चों के अभिभावक अनिवार्य रूप से ति.ति.दे. के द्वारा प्रकाशित होने वाली 'सप्तगिरि' आध्यात्मिक मासिक पत्रिका का चंदादार होना आवश्यक है। प्रश्नोत्तरी के जवाबों के साथ अनिवार्य रूप से चंदादार की अपनी चंदा संख्या, नाम, पता, पिन-कोड के साथ फोन नंबर भी स्पष्ट रूप से लिख कर हमारे कार्यालय को भेजना चाहिए।
4) प्रश्नोत्तरी के जवाब, प्रश्नों के नीचे सूचित खाली जगहों पर लिख कर भेजना चाहिए।
5) प्रश्नोत्तरी के जवाब पत्र ओरिजनल या जिराक्स प्रति मान्य है।
6) जवाबों में कोई काट-छांट या सुधार नहीं होना चाहिए।
7) प्रश्नोत्तरी के जवाब पत्र **इस महीने का 25वाँ तारीख** के अंदर पहुँचाने की अंतिम तिथि है।
8) इस प्रश्नोत्तरी या क्विज में सही जवाब लिखने वाले बच्चों में से तीन बच्चों को मात्र ही 'लक्कीडिप पद्धति' में चुन कर विजेताओं की घोषणा की जाती है।
9) घोषित विजेताओं के नाम आगामी मास की 'सप्तगिरि' पत्रिका में प्रकाशित किए जाते हैं।
10) ति.ति.दे. के प्रधान संपादक कार्यालय में कार्यरत कर्मचारियों के बच्चे इस प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता के लिए अयोग्य हैं।
11) प्रश्नोत्तरी से संबंधित कोई भी समाचार फोन से नहीं दिया जाएगा। कृपया फोन से संपर्क न करें। ति.ति.दे. का निर्णय ही अंतिम है।
12) क्विज का समाधान भी इसी पुस्तक में है।

प्रश्नोत्तरी-जवाब कृपया इस पते पर भेजे :-
प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय,
दूसरा मंजिल, ति.ति.दे. प्रेस, के.टी.रोड,
तिरुपति-517 507, तिरुपति जिला, आंध्र प्रदेश।

बच्चे का नाम..
लिंग/आयु..........., **चंदा नंबर**.......................
पता..
....
मोबाइल नं...

1) प्रभु श्रीराम का प्रिय भक्त कौन है?
ज)..
2) अंजनादेवी का पती का नाम क्या है?
ज)..
3) अजंनादेवी को संतान प्राप्ति के लिए तपः करने का सूचना दी गयी ऋषि का नाम क्या है?
ज)..
4) शिव जी को निंदा करने वाली प्रजापति का नाम क्या है?
ज)..
5) योगाग्नि में आत्म समर्पण करनेवाली देवी का नाम क्या है?
ज)..
6) दाक्षायणी के पती का नाम क्या है?
ज)..
7) विष्णुमूर्ति ने सतीदेवी का शरीर को किस आयुध से खंडित किया?
ज)..
8) अर्जुन ने किस के द्वारा गीतोपदेश को प्राप्त हुआ था?
ज)..
9) कार्तिकेय का माता-पिता का नाम क्या है?
ज)..
10) कार्तिकेय को कितने मुख है?
ज)..
11) कार्तिकेय का वाहन का नाम क्या है?
ज)..
12) कार्तिकेय के झंडे का चिह्न क्या है?
ज)..
13) महान दाता के रूप में ख्याति पाई दाता का नाम क्या है?
ज)..
14) कर्ण ने ब्राह्मण को किस लकडी को दान किया?
ज)..
15) 'तिरुप्पावै' के लेखक का नाम क्या है?
ज)..

बिंदी को जोड़िए

रंगों को भरिये क्या!

निम्न लिखित को मिलाएँ!

1) श्रीकृष्ण	अ) ध्वजस्तंभ
2) ऋषि-मुनि	आ) जानवर
3) जंगल	इ) अर्जुन
4) श्रीमहाविष्णु	ई) यज्ञ-याग
5) मंदिर	उ) शंक-चक्र

1) इ 2) ई 3) आ 4) उ 5) अ

श्री महाविष्णु गायत्री मंत्र

ॐ श्री विष्णवे च विद्महे
वासुदेवाय धीमहि,
तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्

चित्रों को जोडिएँ

(a)

(b)

(c)

(d)

(e)

जवाब : a) 4, b) 3, c) 1, d) 5, e) 2.

(1)

(2)

(3)

(4)

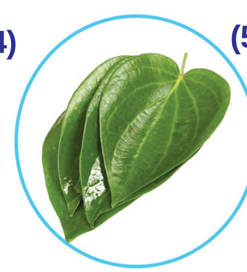

(5)

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

सप्तगिरि

(आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका)

चंदा भरने का पत्र

1. नाम : ....
   (अलग-अलग अक्षरों में स्पष्ट लिखें) ....
   ....
   पिनकोड ....
   मोबाइल नं ....

2. वांछित भाषा : ☐ हिन्दी ☐ तमिल ☐ कन्नड
   ☐ तेलुगु ☐ अंग्रेजी ☐ संस्कृत

3. वार्षिक चंदा ☐ रु.240/-; जीवन चंदा (12 वर्ष ही मात्र) ☐ रु.2,400/-;
   विदेशियों के लिए वार्षिक चंदा ☐ रु.1,030/-

4. चंदा का पुनरुद्धरण :
   (अ) चंदा की संख्या :
   (आ) भाषा :

5. शुल्क का विवरण :
   मांगड्राफ्ट संख्या (D.D.) / भारतीय डाकघर (IPO) /
   ई.एम.ओ. (EMO) :
   दिनांक :

स्थान :

दिनांक : चंदा भरनेवाले का हस्ताक्षर

. . . .

- वार्षिक चंदा : रु.240/-, जीवन चंदा (12 वर्ष ही मात्र) : रु.2,400/- 'प्रधान संपादक, ति.ति.दे., तिरुपति' के नाम से मांगड्राफ्ट लेकर निम्न सूचित पते पर भेज सकते हैं।
- नवीन चंदादार या चंदा का पुनरुद्धार करनेवाले इस पत्र के कूपन को काटकर, एक कागज पर चंदादार को अपने पूरे विवरण के साथ सुस्पष्ट लिखकर निम्न पते पर भेजना चाहिए।

प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय,
दूसरा मंजिल, ति.ति.दे.प्रेस, के.टी.रोड,
तिरुपति-517 507. तिरुपति जिला, (आं.प्र)

धोखा मत खाओ!

हमारी दृष्टि में आया है कि कुछ लोग 'सप्तगिरि' आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका की सदस्यता के लिए यह कह कर राशि वसूल करने में मग्न हैं कि वे श्री बालाजी के दर्शन, प्रसाद आदि की व्यवस्था करेंगे। ऐसे लोगों पर विश्वास न करें। उनसे सावधान रहें।

श्री बालाजी के दर्शन और प्रसाद पाने केलिए 'सप्तगिरि' पत्रिका कार्यालय से कोई संपर्क न करें। क्यों कि उन से पत्रिका कार्यालय का कोई संबंध नहीं है। कृपया चंदादार अपना चंदा नकद को सीधा 'प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय, ति.ति.दे., तिरुपति' पता को भेजना पडेगा।

ति.ति.देवस्थान ने सदस्यता राशि लेने के लिए किसी व्यक्ति को नियुक्त नहीं किया। अतिरिक्त राशि का भुगतान न करें। दलालों पर विश्वास मत करें।

STD Code: 0877

दूरभाष : 2264359,
2264543.

संपादक : 2264360

कॉल सेंटर नंबर :
2233333, 2277777.

मंत्र - ॐ नमो वेंकटेशाय

https://ttdevasthanams.ap.gov.in
इस वेबसैट से भी सप्तगिरि पत्रिका चंदा भर सकते है।

Printed by Sri P. Ramaraju, M.A., and Published by Dr.K. Radha Ramana, M.A., M.Phil., Ph.D., on behalf of Tirumala Tirupati Devasthanams and Printed and Published at Tirumala Tirupati Devasthanams Press, K.T.Road, Tirupati-517 507. Editor : Dr.V.G. Chokkalingam, M.A., Ph.D.

सप्तगिरि

पत्रिका चंदा विवरण

- 'सप्तगिरि' ति.ति.दे. के द्वारा प्रकाशित एक आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका है।
- 'सप्तगिरि' आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका में कई आध्यात्मिक अंश प्रकाशित हो रहे है।
- 'सप्तगिरि' पत्रिका तेलुगु, तमिल, कन्नड, हिन्दी, अंग्रेजी और संस्कृत भाषाओं में प्रकाशित हो रहे है।
- 'सप्तगिरि' पत्रिका के वार्षिक चंदा रु.240/-.
- 'सप्तगिरि' पत्रिका के जीवन चंदा (12 वर्ष ही मात्र) रु.2,400/-.
- 'सप्तगिरि' पत्रिका विदेशियों के लिए वार्षिक चंदा रु.1,030/-.
- 'सप्तगिरि' पत्रिका के चंदा भरने के लिए पाठक गण मांगड्राफ्ट(D.D.), ई.एम.ओ(EMO), भारतीय डाकघर(IPO) और ऑनलाइन (ttdevasthanams.ap.gov.in) के द्वारा दर्ज कर सकते हैं।
- 'सप्तगिरि' पत्रिका चंदा केलिए पाठक किसी भी जातीय बैंक में 'चीफ एडिटर, सप्तगिरि मागजैन, टी.टी.डी., तिरुपति' के नाम पर डी.डी. लेकर, डाकघर के द्वारा संबंधित विवरण लिख कर, 'प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय, दूसरा मंजिल, ति.ति.दे. प्रेस, के.टी.रोड, तिरुपति' पते को भेजना चाहिए।
- चंदादार अपने घर का पता, पिनकोड, मोबाइल नंबर, वांछित भाषा विवरण स्पष्ट रूप से लिख कर भेजना चाहिए।
- 'सप्तगिरि' पत्रिका समय पर नहीं पहुँचे, तो घर के पते में कोई परिवर्तन हुई, तो यहाँ सूचित ई-मेइल (chiefeditortpt@gmail.com) से कृपया संपर्क करें।
- अतिरिक्त समाचार के लिए दूरभाष-0877-2264543 / 2264359 से संपर्क करें।
- अन्य विवरण केलिए "प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय, दूसरा मंजिल, ति.ति.दे. प्रेस, के.टी.रोड, तिरुपति - 517 507" पते पर संपर्क करें।
- सीधे संपर्क करना चाहिए है, तो प्रधान संपादक कार्यालय के समयों में संपर्क करें।

SAPTHAGIRI (HINDI) SPIRITUAL ILLUSTRATED MONTHLY Published by Tirumala Tirupati Devasthanams
Printing on 25-11-2024 & Posting at Tirupati RMS Regd. with the Registrar of Newspapers for
India under RNI No.10742/1957. Postal Regd.No.TRP/152/2024-2026 "LICENCED TO POST WITHOUT PREPAYMENT
No.PMGK/RNP/WPP-04(2)/2024-2026" Posting on 5th of every month.